शत दल

'शतदल' नामक यह पुस्तक किन्हीं कारणों से अब
'अनमोल मणियां'
नाम से प्रकाशित हो रही है।

लेखिका व प्रकाशिका —
कमला देवी 'कमल' 'भूषण'
रानी बाजार, बीकानेर

मुद्रक —
मा० रामरत्नपाल सिंहल
सुमित्रा प्रिंटिंग प्रेस, भिवानी।

प्रथम बार १६५८ कीमत एक रुपया
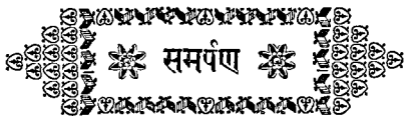
उन चरणों में,
जो मेरे सर्वस्व है।
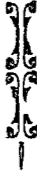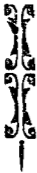
"शतदल" लेखिका के गद्य गीतों का संग्रह है। मैंने "शतदल" के कुछ दलों को देखा। ऐसा लगा कि इन में अच्छे गद्य गीत के बहुत से गुण यत्र-तत्र बिखरे हुए हैं। यह लेखिका का प्रारम्भिक प्रयास ही है, अतः इस में प्रौढ़ रचना का सा माधुर्य और शब्दों की नाप तोल ढूंढना ठीक नहीं है। तथापि इतना निश्चित है कि यह उस के उज्ज्वल भविष्य का संकेत अवश्य है।

लेखिका की कल्पना और भावना ने गोता लगा कर जीवन और जगत के रहस्य ढूंढ लाने का एक अच्छा प्रयत्न किया है। मुझे आशा है कि आज नहीं तो कल वह अच्छे मोती ढूंढ कर लाने में सफल होगी।

गांधी आश्रम
हटूंडी (अजमेर)
१-१२-४६

हरिभाऊ उपाध्याय

विश्व की स्थिति कठिन परिस्थिति मे थी। जग निय-ता की निगूढ़ समस्या जटिल हो रही थी। विश्व का वातावरण निरीह शुष्क था। ऐसे समय में विश्वेश्वर ने पुरुषसिंह का निर्माण किया।

विश्वेश्वर और वातावरण के कठिनतर होने से पुरुष में कठोरता समाई। भुजाओं मे असीम बल भरा। भगवान के

सुकोमल कर स्पर्श से कठोरता के साथ इसके अन्तर में स्निग्धता और तरलता का सम्मिश्रण हुआ, किन्तु यह ऐसा प्रतीत हुआ जैसे शुष्क से कठोर घट मे सचिक्कन नवनीत भरा हो। उसकी भावनाओं में दृढता और निश्चलता का समावेश हुआ। उसका पुरुषार्थ मचल सा उठा। बल के आधिक्य से मुट्ठी बाँध कर विस्फारित नेत्रों से विश्व को देखने लगा।

भगवान मुस्कराए। उन्हों ने विश्व की ओर इंगित किया।

पुरुष केहरी सा मस्तक उठाए मस्तानी चाल से विश्व की ओर मुड़ा। उसे आता देख नन्हे नन्हे पक्षी भय से उड़ चले। नदी नालों ने सीधा मार्ग लिया। जड़ वृक्षादि स्तब्ध हो गए और विश्व की रमणी सहम कर तटस्थ हो गई, किन्तु अपने अनियारे तीखे नयन बाण से चुपके से पुरुषसिंह को विद्ध किया। पुरुष ने क्षण भर अपनी गति अवरुद्ध की। उसने साश्चर्य मोहनी रमणी की ओर निहारा। रमणी मुस्कराई। वह भी कुछ हँसा। उसने साथ चलने का रमणी की ओर संकेत किया। रमणी ने अपने को कोमल, निर्बल सा समझ सहर्ष पुरुषसिंह का सहवास स्वीकार किया।

रमणी के सहवास से पुरुष का पुरुषार्थ खिल उठा। रमणी के साथ वह भी रमणीक सा प्रतीत होने लगा। रमणी की सुकोमल स्निग्धता ने उसकी शुष्कता पर आवरण सा ढक दिया। मोह और प्यार की रेशम रज्जू ने उसके बल के बवंडर को बांध सा दिया। पुरुष नियन्त्रित सा नारी पर और अन्य नि:शक्त जीवों पर शासन करने लगा। प्रतिक्षण वह नारी की रक्षा में तत्पर रहने लगा। सम्मानित नारी के लिए महायुद्ध का आह्वान करते हुवे अपने शीश की बलि देने में भी नहीं चूकता। वह प्राण देकर भी विश्व की अनुपम मोहनी सुकोमल नारी की रक्षा करता है। मानों रक्षा करना ही उसके जीवन का ध्येय हो। जीवन की सार्थकता हो।

प्रस्तर सा पुरुष अनेक झंझावात को सहता हुआ अचल सा अपने कार्य कर्म में लगा रहता है। अपने बाहुबल से निशंक घूमता हुआ धन जन उपार्जन करता रहता है। नारी निश्चिन्त उसकी आश्रित बनी, उसकी पिपासा शांत करती रहती है। उसकी छत्र छाया में सुख विभोर हो अपनी तल्लीनता से पुरुष में विश्वम्भर के दर्शन कर सार्थक हो उठती है। और पुरुष नारी में महामाया के दर्शन करता है।

आश्चर्य नहीं पुरुष और नारी विश्वम्भर और महामाया के प्रतिरूप ही न हों।

धरातल और अम्बर के बीच, जलाशय के गर्भ में, शून्य-विश्व को देख, लीलामय भगवान ने सृष्टि रचना के उद्देश्य से अपने भृकुटि विलास से निरीह अवधूत मानव की सृष्टि की।

जलजन्तु से मानव से अपना सृष्टि वृद्धि का उद्देश्य सफल होता न देख, मायामय भगवान ने अपनी माया से मानव को रमणीक बनाने के लिए, अपनी समस्त कला से मनोहर रमणी का सृजन किया। मानव देखकर चकित, थकित सा हो गया। उसने उसे अपना साथी चुना। उसका हाथ थाम कर वह विश्व की ओर चला। उसके कोमल कर स्पर्श से वह रोमाञ्चित हुआ। उसने चकित नयनों से, उसके भव्य विशाल नयनों में नयन गड़ा कर देखा। वह स्तब्ध सा रह गया। पुन उसके चन्द्रमुख को देख सिहर उठा। पुलक उठा। उसे मोह हुआ। वह उसे अपनी समझने लगा। धीरे से हृदय में प्यार जगा। प्यार से मानव और रमणी जगमगा उठे। विश्व का मार्ग सरल हुआ।

नारी को उसने अपना सर्वस्व दिया। रमणी में उसकी प्रत्येक श्वास अभेद होकर जा मिली। उसकी श्वास श्वास में रमणी का रमण होता रहा। उसने अपने हृदय मे उसका प्रतिबिम्ब देखा। नयनों मे उसी का मद ढ़लते देखा, और प्रत्येक हलचल में उसकी सुवास रमी देखी। वह रमणी में जा रमा।

प्यार के आदान प्रदान से सृष्टि का चक्र चल पड़ा पुरुष और रमणी दो उसके चक्र हुवे। वह विश्व में रात दिन घूमते रहते हैं। घिसते पिसते रहते हैं, सृष्टि रचना के उद्देश्य के लिए।

उनका परिश्रम सफल हुआ। अगणित प्राणी विश्व में अवतरित हुए। विश्व खिल उठा। नारी ने मानव को खिलाया, जगाया, हुलसाया। अपने मोह पाश में ऐसा फसाया कि उसे अपना उद्धार असाध्य हो गया। ऐसी शृंखला में आबद्ध हुआ कि जो अटूट है, किन्तु मानव उसको कठिन बंधन नहीं समझता उसे तोड़ने को वह कभी नहीं तड़फडाया। प्रत्युत यह बंधन उसे मीठा लगता है। रेशम की कोमल रज्जूसी शृंखला प्रतीत होती है। वह उसे हुमक कर सहलाता रहता है। प्रतिक्षण उसके अजर अमर होने की अभिलाषा रखता है।

नर नारी के जोडे ने विश्व में प्रत्येक पदार्थ के जोडे बना दिये और अभेद दम्पति ने विश्व को विस्तृत कर दिया।

प्रलय के अन्त में, क्षीर सागर मे शेष शैया पर नील सरोरुह से श्यामवर्ण भगवान ने अपने अलसित अरुण से कमलनयनों को खोला। विश्व की शून्यता ने उनकी दृष्टि को सरोष कर दिया। भ्रूभंगी से पार्श्व की ओर देखा। क्षण भर में दिव्य आलोक से विश्व चमत्कृत हो उठा। नव प्रस्फुरित लतिका सी सुकोमल लचीली नारी ने मृणाल सी भुजाओं को उठाकर पल्लव से मृदुल सुकरों को आबद्ध कर मृदु मुस्कान से भगवान के आदेश की प्रतिक्षा करने लगी।

भगवान ने मुस्कराते नेत्रों से विश्व की ओर इंगित किया। *माया अपने समस्त आलोक को समेट कर विश्व की ओर मुड़ी।*

निकट ही विश्व के प्रपंच से अनभिज्ञ सरल, मृदुल निरीह भोले मानव को बाल क्रीडा सी करते हुए देखकर माया अपना अंचल उसे छुआता हुई शीघ्रता से आगे निकल गई।

मानव को फुरहरी सी आई। हृदय में सिरहन सी भर गई। उसका मानव मचल उठा। वह चकित नेत्रों से इधर उधर देखने लगा। कुछ दूर पर माया खिलखिलाई। मानव के नेत्रों मे बिजली सी कौंध गई। दोनों हाथों से आखों को मलकर देखने लगा। उसे आश्चर्य हुआ कि मैं कहाँ हू। मेरा वह विश्व कहाँ है। यह कौन है। अरे क्षण भर मे यह क्या हो गया। वह सचुपाया सा, विकल सा माया की ओर दौड़ा। माया आगे चलती जाती थी, मानव पीछे। कभी वह रुक कर हरित मित वृक्षों को आश्चर्य से देखता। कभी शुभ्र ललित कुञ्जों

में मतवाला सा घूमने लगता। कभी तरल ताल, तलैयों के मीठे तोय को पीकर मग्न हो, भ्रमित सा जल को उछालता हुआ अठखेलिया करने लगता।

उसे प्राकृतिक जाल मे उलझा हुआ देख जलकी शीतल बूंदों मे माया ने प्रवेश किया। उसकी अजलो के जल बिन्दु स्वर्ण बिन्दु हो गये। उसे वह बडे सुहावन लगे। वह ललचाई दृष्टी से उ हे देखने लगा। कभी उन्हे चूमता। कभी हृदय से लगाता। उसकी तृष्णा इतनी बढ़ी कि वह सोचने लगा कि यह समस्त जल ऐसा सुनहरा हो जाऐ तो क्या ही अच्छा हो। उसने शीघ्रता से उस अजली को अपने एक छोर मे बाध लिया। उसन लपक कर पुन एक अञ्जली भरी, किन्तु माया तो पल्ले मे बंध चुकी थी वह भरी अञ्जली जल की हो रही। वह बार बार भरता और फेंकता रहा। उसका अभिष्ट सिद्ध न हुई। किन्तु माया के स्पर्श से भारी अवश्य हो गया। और उसके हृदय मे अनक कामनाए जाग उठीं। अनेक तृष्णाओ से उद्वेलित हो उठा। वह लचकता सा उठकर एक वृक्ष की छाया मे आ बैठा। पास में बधे स्वर्ण बिन्दुओं को खोलकर फिर सतृष्णा नत्रों से देखने लगा।

माया मुस्करा कर फिर रमणी के रूप मे उसके सामने आई। अपने भव्य रूप से उसे मोहित कर सन्निकट आ बैठी।

उसके स्पर्श से मानव पुलक उठा, अपन वह स्वर्ण बिन्दु उसकी भेंट किए। दूसरे क्षण उसने चकित नयनों से देखा कि ऐसे स्वर्ण बिन्दु तो न जाने कितने उसकी देह पर हैं। वह हुलस

कर पूछ बैठा, अरी इतने सुन्दर इतने सारे सुनहरे बिन्दु तू कहा से ले आई ? चल मुझे तो बता। माया ने कली सी अगुली से उसे गुदगुदाया, और साथ चलने को इंगित किया।

तब से आज तक मानव माया के पीछे २ फिरता है। न जाने उसका अभिष्ट सिद्ध हुआ या नहीं, किन्तु तृष्णा तो अनन्त काल से शात न हुई। न होने की सम्भावना है। माया उसे खिलाती, रूलाती और भुलाती रहती है। किन्तु माया में भ्रमित मानव कब चैन पा सकता है। उसके जाल के फन्दे क्षण क्षण में उसे कसते रहते हैं। वह अनेक बार विकल हो कर उन फन्दों को काटना, तोड़ना चाहता है किन्तु उतना ही अधिक उनमें उलझ पड़ता है। एक आह के साथ श्वास तोड देता है पर माया का फन्दा नहीं तोड़ सकता। मानो वह अजर अमर हो।

बाल क्रिडा के अन्त में, बाल्य और कौमार्य अवस्था के सधिस्थल पर सुनहले प्रभात मे लुभावने मोहक मोह ने मानव का पल्ला पकड़ा। छोटे से मानव ने जननी के हाथ में चमकीली मुद्रा देख, उन्हें लेने के लिये ललचीली मुद्रा से सुकोमल करों को फैलाया। जननी ने मुलक कर एक मुद्रा हाथ पर रखते हुए एक प्यार की मुद्रा उसके भोले प्यारे से मुख पर रख दी।

मुद्रा को उसने छिपा कर रखा। रखते ही उसे गुदगुदी सी हुई। वह किलक कर खिला, और हसा। उसी क्षण मोह ने प्राणों में घर किया। बाल्य सुलभ सरलता ने उसे जानने भी न दिया कि उसके हृदय में शत्रु ने डेरे डाल दिये हैं। वह जीवन भर उसे विनिष्ट करता रहेगा, परन्तु वह उससे विजय न हो सकेगा।

मोह ने नन्हें हृदय मे धीरे धीरे मोरचा बदी आरम्भ की। लोभ को जगाया। तृष्णा को बढाया और कामनाओं को सचेत किया। इन सब ने मिल कर, अपने अपने कार्य कुशलता पूर्वक आरम्भ किये। देखते देखते उसका नन्हा हृदय विस्तृत हो चला। कामनायें अमित होकर मतवाली हो उठी। क्षण २ में उनकी प्यास बढने लगी। वह मानव को विकल सा रखने लगी। प्रतिपल उनकी पूर्ति की धुन में वह व्यग्र रहने लगा। तष्णा की तृष्णा तो एक क्षण को भी न बुझती, प्रत्युत बढती ही जाती थी। मानव विवश क्षुब्ध था, परेशान था। सारी शक्ति से तृष्णा की पूर्ति मे तत्पर रहता। वह सोचता रहता

कि यह वस्तु मिलने पर तृष्णा शांत हो जायगी। यह चीज हाथ आने पर फिर तृष्णा न रहेगी। रात दिन पच पच कर न जाने कितना सारा आर्थिक वैभव इकट्ठा कर लिया, परन्तु तृष्णा तो ज्यों की त्यों ही रही। केवल भार ही संचित किया, और अपने बन्धन की कड़ियां ही अधिक सुदृढ़ की।

उसके बन्धन को अधिक कसता हुआ देख लोभ अलग ही अपने हथकंडे दिखाने लगा। वह क्षण क्षण में मानव को ललचाता, फुसलाता, पुचकारता सा अपने व्यापार में लगाये रखता है। विश्व का कण से मण तक का लोभ उसे सताये रहता है। जर, जमीन, जोरू का लोभ जालिम होकर उसे खाये जाता है। वह नहीं जानता कि यह आस्तीन के साँप मुझे ही डसेंगे।

मानव के भयानक लोभ की कथा विश्व के वातावरण में अंकित है। उसके अणु अणु में उसकी विषैली छाप छपी है। पद पद पर मानव पढ़ता है, थर्राता है, कांपता है, किंतु, उससे बचने का कोई मार्ग न देख उसे ही छाती से लगाये जीवन समाप्त कर देता है, किन्तु इन विषैले शत्रुओं का व्यापार विश्व में जैसे का तैसा ही चलता रहता है।

यह है मानव के इतिहास की जटिल समस्या। उसकी दुरुहता का दिग्दर्शन, और है उसके जीवन का प्रतिबिम्ब !!

मद समीर से नव विकसित कुसुम सा, नवनीत सा सुकोमल चिकन और चचल मृग छौने सा भोला नवजात शिशु विश्व मे आकर जब प्रथम किलकारी मारता है। तभी आशा अपनी प्रथम तूलिका उसे छुआती है। वह चकित नेत्रों से मा की ओर हाथ फैला कर यह आशा करने लगता है कि मा ने अब लिया, अब लिया। अथवा मानव के साथ यह आशा जन्म जात ही है इसको कौन जाने।

कुछ भी हो। चपल चचला सी इन्द्रधनुषी आशा क्षण २ में मानव को सब्ज बाग दिखाती रहती है। वह भी आशा के डोरों में बधा प्रणयी सा आशा के हृदय में ही मानों झूलता रहता है। आशा हुमक कर उसे हुलसाती, सहलाती सी रहती है। उसके नयनों मे पल पल मे सुहावने मन मोहक चित्र चित्रित होते रहते हैं। वह आशा को कस कर पकडता है। आशा उसे सुदृढ कसती रहती है। दोनो का अभिनय, विनिमय विश्व का अलौकिक रहस्य हो उठता है स्वय तद्र नि शक होकर मानव आशा के अर्पित हो जाता हैं वह भूल जाता है कि मैं आशा से कहीं बलवान हू। मैं उस पर हावी हो सकता हू, न कि वह।

मानव को निस्तेज देख आशा ने अपने पख फैलाये। उनपर बैठा कर कभी उसे अनन्त की ओर लेजा कर तीखे तेज समीर मे झूलाती है। वह मद मस्त हो केवल आशा को सतृष्ण नेत्रों से एक टक देखता हुआ उसमे ही खो जाता है। कभी आशा पख थर थरा कर उसका हृदय कपा देती है। वह सजल

नयनों से अनुकम्पा की भीख मागने लगता है। उसकी दयार्द्र स्थिति आशा की मुस्कान होती है। वह मुह फेर कर दूसर क्षण पलों को जरा स्थिर सा कर लती है। मानव को ढाढ़स होता है। प्यार से आशा को देखने लगता है, किन्तु निरीह आशा को किसी का प्यार नहीं भाता। वह सरल, तरल, सुकुमार होते हुए भी नितान्त शुष्क कठोर हो जाती है। एक क्षण में मानव पर तुषार पात कर उसके हृदय को चूर चूर कर कण कण मे निखरा देता है। उसके मानस की निधि अश्रुमुक्त से अठखेलिया करती हुई मानव को सूना कर डालती है। कभी उसे ऊंचा उठा कर गहन गह्वर मे ढकेल देती है। वह हत् बुद्धि हो ज्ञान शून्य सा हो जाता है। अधेरे मे आशा का अचल टटोलता है, किन्तु भटकने के अतिरिक्त कुछ हाथ नहीं आता। वह चीख कर भगवान को पुकारता है, परन्तु अन्तरिक्ष से खिल खिलाने की आवाज सुन कर वह और भी तिलमिला उठता है। यह है आशा की खिलवाड। उसकी सोजन्यता और उस का कर्तव्य कर्म ॥

शक्तिशाली मानव आशा के खिलवाड को मान्य समझ कर असीम भूल करता है। वह समझले मन को लुभाने, ललचाने और फसाने वाली आशा धोखे की टट्टी, आकाश कुसुम और मृग मरिचिका के अतिरिक्त कुछ नहीं।

महान मानव के आगे आशा लघु कण और वह विस्तृत कठोर प्रस्तर है।

हरीत वृक्ष की डाल पर बैठे सुचिक्कन पल्लव दल से खेलते हुए व्योम बिहारी भोले पक्षी को देख कर मायावी मानव का हृदय टीस उठा। वह अपने और उसके जीवन को तुलनात्मक दृष्टि से देखने लगा। उसे स्वच्छंद पक्षी का जीवन रुचिकर हुआ। वह सोचने लगा सरल भोले पक्षी तुझे माया क्यों न छू पाई, विश्व में आकर भी माया मुक्त रहा। यह कैसा आश्चर्य है जहा बैठ गया वहीं तेरा घर, जहा मिल गया वहीं खा लिया। रैन बिताने को तिनके का सहारा बहुत। न अपनों की चिन्ता, न परायों की। मोह माया चिन्तादि विकार, सब मानव के पल्ले ही पड़े हैं। वह रात दिन चिन्ता में घुला जाता है। पल पल में माया सजग करती हुई भड़काती, ललचाती, दुलराती सी रहती है। एक क्षण को भी माया पल्ला नहीं छोड़ती, और मोह! मोह का तो मानों क्रत दास है। इसका मोह, उसका मोह, एक तिनके का भी मोह उसे होता है। अपने कुटुम्बों का मोह तो उसे नरक कुड की ओर ढकेलता रहता है।

एक तू है जब तक तेरे नवजात शिशु बड़े नहीं होते, तब तक ही तू इनके पालन पोषण में व्यस्त रहता है। केवल अपने कर्तव्य कर्म को पूरा करने के लिये। जहा बड़े हुए तू स्वय ही मारकर निकाल देता है। तेरा आदेश होता है जाओ चरो चुगो। फिर! फिर तू मुड़ कर भी नहीं देखता, कि वह मरते हैं या जीते। कभी यह भी नहीं विचारता कि तेरे भी कोई सन्तान थी। तेरा भी कोई कुटुम्बी था। चार दिन को गर्भकाल

ने घर बनाया, और उस कर्तव्य को पूरा करने पर तू नहीं देखता कि तेरा भी कहीं घर था। कर्म का, कर्तव्य का, नियम का पालन किया कि बस रे सुजन पक्षी! काश मानव भी तेरे जैसा होता। तेरे जैसा मोह माया रहित होता तो विश्व ही स्वर्ग स्थली न बन जाता। यह ममता की जंजीरें न निखर पड़ती। मानव तेरे जैसा स्वच्छन्द होता, आह भरते भरते मानव का रंग श्यामवर्ण हो गया। विश्व से उठकर हरीत डाल पर उसका मन झूलने लगा। क्षण भर को वह सब मोह माया भूल गया, किन्तु दूसरे ही क्षण उसका भारी मन विश्व में आ गिरा। अपनी धूल झाड़कर माया मे ही आ लगा।

"तुलना में मानव ही भारी रहा। वही विश्व में आ टिका"।

यौवन के प्रभात काल में, अरुण मुखी, यौवन के भार से लचकती कोमलाङ्गी लजीले, ललचीले, मुग्धिल से अनियारे नयनों का भार उठाय, चन्द्रमुख को अचल घन में छिपाये, खिलते हुए यौवन कुसुम को आवरण में ढके हुए कमल दल से गुलाबी अधरों को मुस्का कर, मुक्ताहल सी धवल दंत पंक्ति को चमकाती हुई, वदकली सी आशाओं का भार लिये, और कामनाओं से गुद गुदाये उछलते हृदय से, यौवन प्याली को छलकाती सी मद मद मराल गति से नवोढा अपने देव के चरण तल के निकट आ बैठी।

इच्छाओं और अभिलाषाओं के झंझावात से झकृत, कामनाओं के बवंडर से झकझोरित और वासनाओं की उत्ताल तरगों से तरगित, प्यार से तड़पते हुए हृदय से, प्यास से सूखे अधर से, मद में ढ़ले मादिल नयनों से, और यौवन मद में झूमते हुए, अपने सुडौल कंपित करों से उसके प्रिय देव ने धीरे से उसका घूंघट पट उठाया, और अपनी गरम गरम अंगुलियों से उसकी चिबुक को उठाया, मुख कुछ ऊंचा किया।

उसने सिहर कर मद ढले नयनों की घनीभूत केशराशि सी काली पलकों को उठाया। पुतलिका पर छवि छाया पड़ते ही पुलक कर पलक झुक गई।

देव चित्रित सा मंत्र मुग्ध सा मोहित नयनों से एक टक देखता रह गया, उसे विश्व का महा ऐश्वर्य अपने चरणों पर

गिरता हुआ प्रतीत हुआ । वह भूला सा उसे सभालने पर असमर्थ सा हो गया ।

प्यास, प्यास में जा मिली । कामना, कामना मे, इच्छा, अभिलाषा सबका सम्मिश्रण हुआ । प्यार की दोनों प्याली मिलकर एक हो गईं । वह मद मे विभोर हो विश्व को भूल उठे ।

जीवन प्रभात के एकी कारण में ही दम्पति की सार्थकता है, और दो पृथक वस्तुओं के मिल जाने मे ही अलौकिकता है ।

जीवन के मंजुल प्राङ्गण से सुकुमारता, सरलता, चचलता समेटे हुवे योवन को दकसाते, उभारते हुए बाल्य और कौमार्य विश्व में जा छिपे। यौवन के झंझावात में उनका जाना मानव ने जाना भी नहीं।

यौवन के वसन्त में, जीवन के उभार में, चढ़ते हुवे मद के खुमार में, आशा कली ने किलक कर चटक कर, अभिलाषा ने खिलकर, मुलक कर, वासना कामना ने मदहोश होकर मानव को विश्व भूल जाने के लिए विवश सा कर दिया। वह गवव्य पथ से फिसल कर कहीं का कहीं जा पड़ा।

वसत के सौरभ ने उसे मतवाला बना दिया। उसके अग २ में मद ढलता सा प्रतीत हुआ। उसके समस्त अग सरलकता की परिधि लाघ असीम में विचरण करने लगे। और प्यास! प्यास तो उसकी अमिट सी हो गई। उसके तृष्णातुर प्राण विकल हो उठे। हाथ फैलाकर वासना उसे अपने गर्व मे डुबाने लगी। कामना सजग करती हुई झटका चली। वह भूल गया कि यह वसन्त अस्थाई है। इसकी मधुरिमा गरिमा क्षणिक है।

मद के चढाव पर उसके अन्त के परिणाम को मानव भूल जाता है।

यौवन के इस मधुर वसन्त की झाकी, जरा के पौर पर खडे हुए मानव के हृदय पट पर अमिट सी अकित रहती है। उसके तारों मे तब भी मानव के श्वास उलझे ही रहते हैं।

सरल तरल से जीवन के प्रथम प्रहर में पौरुष और मनुष्यत्व को निरीह भोले अनभिज्ञ से मंजुल सुकुमार नन्हे कलेवर में छिपाए, आशा अभिलाषा को मुट्ठी में बांधे हुए, विश्व के चित्र को नयनों में भरे हुए और गर्भस्थ भीषणता से आंखें मूंदे हुए मानवी के गर्भ से नन्हा शिशु धरातल पर आया। धरातल की कठोरता का स्पर्श कर चीख कर नयन खोले। साश्चर्य चकित नयनों से विश्व को देखने लगा, किन्तु विश्व की चमक से, उसके असह्य वातावरण से उसका दम सा घुटने लगा, वह चीख चीख कर रोने लगा।

प्रगाढ पीडा को भूलकर, अपनी भावनाओं और कामनाओं की साकार मूर्ति को निःशंक निर्बल करों से हुलस पुलक कर मां ने तत्काल अपनी कोमल गोद में उठा लिया। मानों सुधांशु उसकी गोद में आ खिला हो। सुखद स्नेहिल सी गोद में बालक सुख की मीठी नींद में सो गया।

किशलय के पात से सुकोमल चिक्कन अपने हृदय के टुकडे पर उसकी चम्पक कली सी अँगुली थिरकने लगी। कभी वह घनीभूत काली केश राशी से अठखेलियां करने लगती। कभी गुलाबी फूल से कपोलों का स्पर्श कर हुलस उठती। कभी बिम्बा से अधरों को सहलाने लगती है। कभी मंजुल कंज से बडे बडे नयनों को पुचकारने सी लगती। उसके समस्त अंग को प्यार भरी अंगुलियां सहला उठी।

मां विश्व को भूल, शिशु के अन्तस्तल तक प्रवेश कर गई, वह अपने को भूल चुकी थी। उसका लक्ष्य, उसकी साधना उसकी समस्त कामना शिशु में निहित हो गई। उसके समस्त उर का स्नेह, उसकी बलैयाँ ले उठा।

उसके रूप और भावना की साकार मूर्ति विश्व में खिल उठी।

जीवन के उभार पर मंजुल प्रभात में, मधुरे यौवन के आगमन से मानव हुमक कर फूला। उसकी आँखों में सरसों फूली, प्राणों मे वसन्त फूला, और वह यौवन में भूल उठा। कामनाओं न तिलक कर मद उडेला। आशा ने रंगीन जाली बिछाई। तृष्णा बढ़ने लगी।

सरल सहज मानव तृष्णा से विकल हुआ झंझावात सा हो उठा। वह मद में मतवाला हुआ भोली नारी की ओर लपका। उधर नारी ने उसे सभाला। अपने अनूठे यौवन की छलकती माणिक प्याली को उसके कंपित करों मे सौंप दी। वह पीने लगा, मदहोश होकर पीने लगा, किन्तु उसकी तृष्णा शान्त न हुई। जितना पाता है उतना ही प्यासा होता जाता है। प्यासे नयनों से मद में झूमता हुआ नारी से कहता है ला और पिला, ला और पिला।

नारी मुस्काती हुई प्याली पर प्याली भरती जाती है। धीरे धीरे उसकी सुरा रिक्त होने लगी। वह सचेत सी हुई। उसने बेहोश मानव को हिलाया, और खाली प्याली उसके अधरों पर रखदी। अचेत मानव ने आखें खोली और रिक्त प्याला को झुंझला कर फेंक दिया।

मद उतरा। मानव सम्भला, किन्तु उस समय होश हुआ, जब कि साकी और प्याली दोनों खाली हो चुके थे। मानव फिर सन्तुष्ट न हुआ, उसे ठुकरा कर वह आगे बढ़ा।

प्याली के उर के दो टूक हुवे उसने फीकी हँसी हँस कर कहा! रे स्वार्थी मानव तूने हाला ही नहीं पी, प्रत्युत अपना जीवन भी पी डाला।

जीवन पीकर भी तृषित मानव किस अमर रस की चाह में भटकता है। इसको कौन जाने।

जीवन के खिलते हुवे प्रकाश मे, अपनी छबीली नायिका आशा के साथ अपनी धुन मे मस्त हुआ हवाई किले बनाता हुआ मानव चला जा रहा है, किन्तु उसकी ललित भावनाओं की विनाशक, उसके मार्ग की अवरोधक, उसके कुशल कार्य कर्म पर तुषार पात करने वाली क्रूर दूतिका निराशा भी उसके पीछे ही लगी है। यह सब जानते हुऐ भी उसने इसकी उपेक्षा की। आशा की विरोधनी निराशा को यह सहन न हुआ। वह प्रतिक्षण इस घात मे रहती कि अपना प्रतिकार अब चुकाऊ अब चुकाऊ।

अपनी सफलता को फूलता, खिलता, पनपता देख कर मानव धरा से ऊ चा चलने लगा। प्राण वायु में हिलोरे मारते हुए चारों ओर की खबर लाने लगे। वह मुक्ताओं से खेलता है। फूलों पर चलता है, और रेश्म पर बेहोश सा सोता है।

अनजाने ही निराशा सामने आई। उसने मुक्ताओं के रजकण बनाए। फूलों के स्थान पर शूल बिछाए। रेश्म की जगह तृण पात डाले। मानव को हिलाकर सचेत किया। उसके सजीले मानस में मसान जगाया। अश्रु बिन्दुओं से मुह धुलाते हुए निराशा मुस्कराई।

आशा ने मुह फेर कर सिसकी भरी। दात पीस कर अरुण नयनों से उसकी ओर देखा और मानव। मानव बेचारा तो दीन होकर वेदीन सा हो गया। उसकी भावना कुचल चुकी, उसकी कामना निखर चुकी, और उसका साहस उत्तर दे चुका है। वह केवल सूना खडहर हुआ भरा रहा है। अब उसे आशा

अच्छी नहीं लगती। वह उससे दूर दूर भागता है। कभी कभी अपने विनाश की जड उसे ही समझ उस पर दांत किट किटाता है। सब कुछ खोकर उसका मानव रोता है, किन्तु स्नेही आशा से न रहा गया। वह उसे फिर सम्भालती है। मानव की उपेक्षा की अवहेलना कर उसको ऐसी दयाद्र स्थिति मे छोड कर जाना नहीं चाहती। फिर सोचती है जाऊ भी तो कहा! मानव के अतिरिक्त मुझे कौन इतने लाड प्यार से सभाल कर रख सकता है। मानव ही मेरा सर्वस्व है। मेरा विहार स्थल है।

उसने अपने सहज स्वभाव को सभाला। मनोहर वेश मे शनै २ मानव के पास आई। उसके कान में कुछ कहा। वह सचेत होकर मुस्करा उठा। उसे अपने बाहुबल मे असीम शक्ति विदित हुई। उसके सर्वाङ्ग मे नव रक्त का सचार हुआ। आशा को विहसते हुये नेत्रों से देखा। आशा झुलमती हुई उसे ऊंची उड़ान में ले उड़ी।

आशा और निराशा के शिकंजो मे जकडा हुआ मानव उठता और गिरता रहता है। इसके न धन अटूट है।

बाल रवि सी मृदुल मृदुल नन्ही नन्ही, ज्योतिमयी रश्मियों के अनुहार समीरण सी द्रुतगामी, हृदय कमल के मकरंद युक्त, मानव तल से गगन विहारी भावना ऊंची उठकर ऊर्द्ध्वलोक मे विचरने लगी। मानस आलोडित होकर उसके चरण तल को चूमने के लिए अधीर हुआ, उद्वेलित हो उठा। किन्तु अस्थिर भावना समीरण पर चली सघन निकुंजो मे कमलदल की पखुरियों को रोंदती हुइ अपना नया ही ससार बनाने लगी। कितनी ही मधुर मधुर रचनाए की। किसी को सजाया, किसी को बनाया। किसी को बिगाड़ा। हटात उसका मन ऊबा। वह फिर सतेज गति से मानव के मानस मे लौटी।

मानव के मानस को हिलाने लगी। उसके प्यार को जगया, और उसे विश्व मे भुलाया। उसकी आँखों पर रंगीन जाली बिछाई। मधुरे मधुरे सपनों का जगाया। मोह का व्यापार लगाया। उसकी श्वास २ मे छलना भरी। उसके मन को मृग मरीचिका मे फसाया। नित्य नये सब्ज बाग दिखाए। उसके हृदय में नई २ कामनायें जगाई। मानव सिहर कर भावना से खेलने लगा। पल पल मे उसको उसका नया ही रूप दीखने लगा। खूब खिलाने पर मानव का पल्ला पकडे हुवे भावना उसे प्रेम के बाजार मे लेगई। वहा उसे खूब खिलाया, भुलाया और रुलाया। किन्तु भावना सतुष्ट न हुई। उसने उसे डाह की हाट पर विठाया। द्वेष की ज्वाला उसके हृदय में जलाई, जिसने कण कण को फूंक कर दाह का मूल्य चुकाया। भोली भावना हँसी। अपनी

शक्ति पर उसे गर्व हुआ। गिरते हुवे मानव मे फिर ममता की श्वास फूंकी। उसकी आँखों में रंगीन विश्व भरा। कण कण मे साध की भावना जगाई। मानव ने विभोर होकर भावना को छाती से लगा लिया। वह उसे प्यार से दुलराता हुआ उसके मोहक रूप पर विमुग्ध हो गया।

मानव और भावना अभेद होकर विश्व में रमने खिलने लगे। मानव की धुरी भावना है।

कज्जल सी काली स्तब्ध मधुरी निशा में, सम्पुट हुए सुपुप्त कमल नयनों के रक्त वर्ण के डोरों पर चलते हुए, मोहक तारों को रोदते हुए जाग्रति के अनुभवों को अचल से भर कर सजीले सपनों ने अपना ससार बसाया। मानव उनमे मिल गया। उनकी सिहरन से पुलकने, उनकी तड़पन से तडपने लगा। भोले मानव ने सुषुप्ति को जाग्रति जाना। उसने सुख को हाथ पसार कर लेना चाहा। सपनों की मधुर झाकी से उसकी प्यास अमिट सी हो गई। प्यास की तडपन से उसके स्वप्न बिखर पडे। वह पुलकते हुये कम्पित हृदय से उन्हे समेट कर फिर सजाने लगा।

एक के बाद एक न जाने कितने स्वप्न सजाये, किन्तु क्या उसकी तृष्णा बुझ सकी। कुद कली से सपुट नयनों पर प्रियतम की छवि से बतियाते २ उसका मन न भरा। कभी चाव से आलिंगन, स्पर्श करता। कभी खिल खिला कर उसे अकपाश में भरने को हाथ बढाता। तत्क्षण स्वप्न टूट कर जाग्रति में परिणित हो जाते। मानव सचकित, साश्चर्य विश्व को निहारने लगता।

यह है स्वप्न और मानव का खिलवाड, किन्तु मानव का जीवन भी तो एक खेल है। वह खेल, खेल ही में पला है, और खेल ही खेल मे एक दिन खेल समाप्त हो जायगा।

जीवन से खेल, खेल से जीवन। इन दोनों की कडी अजर अमर है।

अति दूर क्षितिज के उस पार सुनहरी आभा लेकर मद मद मुस्काते हुए मथर गति से चलती हुई सरल, सजीली, भोली सी सुकुमार ने अनजाने मे ही नवोढा के प्राणों मे प्राण भर कर, चुपके से तन मे सिहरन भरते हुए उसके मन मे प्यास ने प्यास भरदी।

नवोढा रगीली हो उठी। अग २ मे पुलक भर उठा, जीवन, जग सब जाग उठा। अंग, जीवन मे प्यास ही प्यास लग उठी। और उसके प्यासे अधर तडप उठे। पीते पीते भी वह अतृप्त हो उठी। नवोढा, चौंकी। अरे, यह कैसी है प्रियतम की प्यास, और आश। आह भर कर वह अपने दोनों हाथों को मलने लगी। मलते मलते जीवन का मध्यान्ह हो आया, परन्तु उसकी प्यास न मिटी। आशा न पूरी हुई, और ना प्रियतम ही मिला। उसके सपने की रात बिखर चली, और बीत चला जीवन का प्रभात्!

तडपते प्यासे अधरों से कसक को अचल में भर कर भोली सी नारी चली। इस विस्तृत ससार मे। चिहुक कर चारों ओर देखा, विश्व भनाया सा प्रतीत होने लगा। उसके हृदय मे धन की प्यास जगी। हँसते हुए कहने लगी, अरे कैसा है प्रभाव। रुपहेला रूप चन्दा के अनुहार है। झटक कर उसने अचल फैलाया, और लगी शक्ति भर भरने। भरते भरते न जाने कितने निशि दिन बीते, पर उसकी प्यास पूरी न हुई, किन्तु जीवन का अवसान निकट आ गया।

अब उसे प्राणों की, अपनों की, न जाने कितनी प्यास लग उठी। हृदय मे त्रास हुआ। जीवन प्यास से भरा, किन्तु फिर भी तृपित जीवन को देखकर वह विक्षिप्त सी हो उठी। कहने लगी झूठी प्यास, झूठा ससार और झूठी सब आशाए हैं।

हुमक कर सचेत हुई। मानस का पेच खुल गया। जीवन को हेच समझते ही मानों उसे अमर लोक का राज्य मिल गया।

दो फूल मानस के चढ़ाए। हृदय की शूल मिट गई, और वह उल्लास से फूल उठी। जब उसे अनुकूल प्यास मिलगई।

प्यास, प्यास, में भेद है। भेद भेद में प्यास है, और यही विश्व रहस्य है।

मस्तिष्क के काले गहन गह्वर को हिलाकर चपल चंचला सी मृदुल स्मृति ने मानस के कठिन प्रस्तर को अपने चरण चिन्ह से द्रवित करते हुवे, उसके भावुक सपनों को जगा डाला। वह रोमाञ्चित हो सिहर उठा, उसकी मुकुलित पृष्ठावलि के पृष्ठ विकसित से होने लगे। वह तन्मय होकर विगत कथानक का सिंहावलोकन करने लगा।

किसी कथानक ने उसे अश्रु मुक्त से मिलाया। किसी ने निश्वासों में ज्वाला भरदी। किसी ने प्राणों में पीड़ा का साम्राज्य सजाया। किसी ने मीठी मीठी कसक भर उसको विह्वल कर दिया। ज्वाला का विस्फोट होते हुए देखकर, मानव ने कंपित हृदय से अपना भाव पलटा, और ज्वाला को दबाते हुए म्लान और फीकी हँसी हँस कर नयनों पर प्रियतम की छवि लाकर बतियाने लगा। कहा एक समय था कि तुम मेरी फुलवारी के बसन्त थे। उसके मधु लोभी मतवाले भ्रमर, और थे उसकी मधुमय मलय समीर, किन्तु आज! आज उजडे वसन्त के पतझड़। विकसित कुसुम को विनिष्ट, करने वाले दस्यु, और टूटी वीणा के व्यथित राग।

मानव मुवक उठा। उसने नयन मूंद लिये। कर से हृन्य थाम समृति पर दांत किट किटा कर उसे दूर हटा देने का असफल प्रयत्न करने लगा, किन्तु शक्तिमान स्मृति सहज ही हटने वाली न थी। उसने मुलक कर धीरे से उसे फिर हिलाया, और कहा कि देख अपने अब तक के चित्रों को। मूढ़ इन्हे क्यों भूल रहा है। यह तेरे ही रक्त से चित्रित हैं। तेरा ही प्यार इनमें भरा अपने स्नेह सिंचित और सचित चित्रों की उपेक्षा न कर।

मानव विदग्ध विमूढ सा हुआ मुह फैलाकर उन्हे देखने लगा। अपने कितने प्यार की सिनिया टूटती फूटती देखीं। कितने टूटते हुए रागों को विजन में वलीन होते देखा। कितने मधु रजित सपने जिखरते देखे, और कितने हास लास से फूले भावों को ऊसर में टूटते हुए देखा। अचेत हुआ सा मानव न जाने कब तक क्या २ देखता रहा।

तब से आज तक स्मृति मानव के लगी रही। उसके हास विलास और विनाश की जड़ स्मृति बनी।

निशि की खिलती फुलवाड़ी के पहर मे, धवल धौत सी, ज्योत्स्ना के विमल प्रकाश से मलिन होते हुए, चाव भरे दीपक के मद प्रकाश मे, नवनीत से कोमल, सिकता से धवल पर्यंक पर अतीत मे उलझी हुई सुघर नारी ने भोली दीप शिखा से पूछा कि क्या तूने मेरा अतीत देखा ?

स्वीकृति सूचक सिर हिला कर दीपशिखा ने कहा कि हां सुनहरा सा, कुछ ज्वलत सा, और क्षणिक सा था तेरा अतीत।

बाला के अर्ध विकसित कमल नयनों मे अतीत झलकने लगा। वह एक लम्बी श्वास लेकर अतीत के तारों को सुलझाने लगी, और फिर तारों मे तारे गड़ा कर पूछने लगी कि हे तारक फूलों, क्या देखा था तुमने मेरा अतीत ?

तारक मुलक कर हँसे, खिले, और झड़ते हुए कहते गये अरी बाला था कुछ हमारे ही अनुहार। खिलता हँसता और अस्थिर सा तेरा अतीत।

बाला ने सिसक कर अश्रु कणों से झड़ते हुए तारों का स्वागत किया और जी मसोस कर खिलते हुए चन्दा को निहारने लगी। अपलक चदा को निहारते हुए चदा मे अपने अतीत को पढने लगी।

विदग्ध बाला की स्थिर दृष्टि से चदा कुल बुलाने लगा। बाला सिहर कर अपने अतीत को प्रत्यक्ष सा देखने लगी, और आलिंगन के लिये चदा की ओर हाथ बढाने लगी। उसकी विक्षिप्त दशा पर चदा खूब खिल कर हँसा। बाला को असह्य

हो उठा। उसने खीज कर कहा, रे चंद्रा तेरे ही अनुहार अतीत का नायक। आज तू क्यों जलते पर अंगार रखता है मूढ़ तू शीतल हो कर ज्वलंत मत बन।

चंदा ने मुलक कर कहा कि सिकता सा शीतल अतीत अपने वक्षस में छिपा कर ज्वाला मुखी क्यों बनी हो सुघड़ नारी कहो अपने जलते हृदय पर अतीत का शीतल जल क्यों छिड़क लेती ? ठंडी आह से तो सब शीतल हो जायगा बाला।

भोली बाला को चंदा के वाक्य बाण से लगे। उसने अपने चन्द्रमुख को आवरण में छिपा लिया। कमल नयन सपुट हो गये। नयन पर झलकते अतीत में राका बिंब आई और अतीत स्वप्न बन कर खिलने लगा। बाला सपनों की रानी बनी। अतीत उसका नायक। वह जी भर कर खूब खुल खेले।

दीप शिखा, चंदा और तारों ने देखा कि बाला और अतीत अभेद है। एक के उर में एक समा रहा है। फिर ऐसी कौन सी शक्ति है जो इन्हें अलग कर के विश्व को दिखा दे।

राका के सूने अंधकार में, मुकलित कलिका सी मुर्झाई, दिन के दीपक सी निष्प्रभ, कज कली सी कनिका को चिबुक पर धरे, विरहणी बाला ने अपनी निश्चिल दृष्टि धरा पर गड़ा दी।

धरा कांप उठी, और सोचने लगी कि इस भारीमना विरहणी को मैं किस प्रकार सभाल सकू गी।

बाला ने अपने अर्ध विकसित मृग लोचनों से धरा पर चित्रित प्रिय के चरण चिन्हों पर जल कणों के दो चार फूल चढाये, और नि श्वासों के आवरण में छिप कर राका में मिल जाने का प्रयत्न करने लगी।

राका ने धीरे से बाला से कहा कि आज मैं तुझे इतनी बुरी लग रही हू, किन्तु जब तेरा प्रियतम तेरे निकट होगा तब ? हँसेगी खिलेगी और मेरे लिये आतुर हो उठेगी।

विक्षिप्त बाला विरह को न सभाल सकी। उसके नयन छल छला आये, और धीरे से सिसक कर बोली—निशि क्यों तीखी बातें कर रही है। तू भी तो निशानाथ के विरह मे कितनी काली पड जाती है, और अश्रु बिन्दु से चू दड़ जड डालती है। तेरी तो नि श्वासों से विश्व भी काला दिखाई देने लगता है। तब फिर —

निशि ने पुलक कर आतुर बाला को अपने अक मे भर लिया, और अपने स्नेह सरल कर को उसके सिर पर फेरने लगी।

बाला विश्व से उठकर स्वप्नलोक मे विचरने लगी। जहा सोने का साम्राज्य सजा था। भावों का मोहक उद्यान लगा था, और प्रेम की मतवाली सरिता बह रही थी। बाला हुमक कर प्रिय के साथ फूलों के हिंडोले मे झूलने लगी। वह अपने को, विश्व को, विरह को सब को भूल उठी, और अपने विरह को सपनों मे डुबा दिया।

सपनों ने विरह को हलका किया। विरह सपना बना, और विरहणी नायिका॥

कुसुमित कुसुम के सुवास सा सुवासित, दिनकर की रजत रश्मियों सा प्रकाशित, और उषा से सुनहरे वर्तमान में मानव पुलक कर खोया सा जा रमा। उसकी सुवास से मदहोश हुआ, तेज से गर्वित हो उठा। और सुनहरे विश्व को देख, वह भूल उठा कि इस से भी कोई भिन्न रूप मेरे विश्व का हो सकता है।

उसे ललचाने को वर्तमान ने अनेक खेल दिखाये। कहीं ठगी के जाल में फसाया। कहीं मान के गर्व में भुलाया, तो कहीं मोह में भटकाया, किन्तु मानव, वर्तमान में भूले मानव के नयनों में तो सरसों फूली थी। उसने एक क्षण को भी नहीं विचारा कि समय अस्थिर है। कालगति का चक्र तो चलता ही रहता है। जो आज है वह कल नहीं। फिर ? फिर विश्व भेद। हाँ यही।

एक पल में मानव का जलता क्षण आया। उसमें तेजवान सुगंधित सुनहरा वर्तमान पलट कर भिन्न रूप हो गया। मानव रो उठा। उसके सारे अरमान जल उठे। उसकी आशा अभिलाषा चीख कर निस्तेज हो गई। उसका संसार लुट गया। लाचार मानव पल्ले झाड़ कर क्षितिज में भविष्य देखने लगा।

जलते हुए वर्तमान को देख कर विश्व ने काल गति को समझा।

आशा से पुलक कर अपने प्राणों में अमित साध समेटे हुए, लालसा में उलझा हुआ मानव, अपने भविष्य को क्षितिज में देखने लगा।

धीरे धीरे वह अपनी सुधि खोकर भविष्य के सुनहरे स्वप्नों में मिल गया।

उसके अर्ध विकसित दीर्घ नयनों में उषा खिली। प्राणों में स्वर्ण बिखरा। मन सरस धारा से प्लावित हो उठा। वह पुलक कर सिहरा, और विश्व से ऊंचा उठकर गगन के शशि को पकड़ने लगा।

भविष्य ऊंचा उठता गया, किन्तु मानव न थका। उसने अपनी पूर्ण शक्ति लगा दी, किन्तु छलनामय भविष्य चलता ही गया।

मानव का मुंह सूख गया। वह खिसियाया सा सतृष्ण नेत्रों से उसे निहारने लगा। उसके भविष्य के स्वप्न टूटने, बिखरने और मिटने लगे। मानव ने आँखें मली। भविष्य की आशा अन्तर में छिपाई, और ठंडी श्वास लेकर कहा--भविष्य के सपनों को सजाना मानव जीवन है। सपनों से जीवन, जीवन से सपने बनते हैं।

खिलते हुए अज्ञात लोक से सोलह शृंगार से सज्जित, पखुरी सी लचीली मृदुल सुकुमार कल्पना ने आकर निश्चल बैठे सरल स्वभाव मानव के हृदय को गुद गुदाया। मानव सजग हुआ। उसका मानस खिला। मन लम्बी लम्बी पेगें भर भूलने लगा। मद मस्त हुआ मानव विश्व को भूल चला। कल्पना हँसी। वह उसे अनन्त लोक में ले चली।

मानव ने चौंधिया कर देखा, विद्युत से फूलों में अनेक लोक बसे हैं। उस चमकीले सुगन्धित लोक में मानव वेहोश सा होने लगा। कल्पना ने उसे हिला कर पीछे ढकेल दिया। मानव की श्वास लौटी। उसने आँखें खोली। अपनी चिर परिचित मुकुलित कलियों को देख कर मुस्कराया। उनकी मृदुल पखुरियों में मिल जाने की कल्पना करने लगा। न जाने कब तक उसका मन कोमल लतिकाओं मे उलझा फूल पात से बातें करता रहा।

कल्पना ने खीज कर उसे झटका। मानव सभला। सामने विश्व को देख, उसकी विचार धारा बह चली। वह श्वांस श्वास पर नया साम्राज्य सजाने लगा। उसके अणु अणु में मोह का राग जोड़ दिया। उसके अमर की कल्पना में डूबा विभोर हो उठा।

मानव की हृद्तन्त्री के तार धीरे से कल्पना ने झनझनाये। उसके नये राग से मानव चौंका। सामने सुख सपनों को मिटता देख कर उसके नयन छलछला आये। भर्राये गले से कल्पना को कोसने लगा।

कल्पना ने पिंघल कर उसके डूबते मन को सहारा दिया। कल्पना ही मानव को उठाने गिराने वाली है।

यामिनी के निविड़ अन्धकार में, दीप शिखा सी, सुकुमार चन्द्र वदनी मार्ग को आलोकित करती हुई, छलकते यौवन का भार उठाये हुए, अपने हृदय में प्यार और साध को सम्भाले हुए नत मस्तक से, अनियारे रक्तिम नयनों को झुकाये हुए, नूपुर की झंकार से स्तब्धता को भंग करते हुए, प्रिय के चरण तल पर प्यार का फूल चढ़ाने को अपनी मृणाल सी भुजाओं को बढ़ा कर सपुट करों की श्रद्धाञ्जली को चढ़ाया।

प्रतीक्षा में बैठे, कामनाओं में डूबे, और मीठे स्वप्न में उलझे हुए प्रिय ने प्रेम में रंगे दीर्घ नयनों को ऊपर उठाया, और प्रेम से हिलते हुए हृदय से, अपनी सुदृढ़ बलशाली भुजाओं को फैला कर अपने सुकरों में प्रेम से भोगी नवोढा की श्रद्धाञ्जली को थाम लिया।

दम्पत्ति की नरम गरम अंगुलियों के स्पर्श मात्र से ही दोनों की हृद्तंत्री के तार झनझना उठे। मीठी झंकार से दोनों विमोहित हो गये। उसके लय में दोनों ने लय होकर विश्वभर में उस राग को भर दिया।

विश्व ने अजर अमर होता दम्पत्ति प्रेम देखा।

किंशुक वर्णी कुसुम के अनुहार तारक सा दमकता अमरावती से सुकुमार चचल विनोद सहास धरातल पर आया। विश्व उसे कठोर सा प्रतीत होने लगा। उसकी शून्यता से ऊब कर अपना दुकूल सभाला, और एक तीखी किलक भरी।

विश्व झनका। प्राणी मात्र चौंके। हृदय मे गुदगुदी का अनुभव करते हुए एक दूसरे की ओर निहार कर मुस्करा उठे। खिल उठे।

प्राणी अपने परिवर्तन को समझ न सका। विनोद ने ठहाका लगाया। उसे विश्व खिलता सा दीखने लगा। उसकी चाल अजीब मतवाली हो उठी। प्राण मे स्फूर्ति, मन मे उमग और श्वास श्वास मे जीवन भर उठा। मोद से छलकता हृदय नई २ साध मे जगमगा उठा। भावना रगीन होकर शिकारी जाल बुनने लगी। भोला, भूला मानव उस में फस जाने को आतुर हो उठा। वह विनोद को हृदय से लगाये विश्व में रम गया। उसका कण २ हँसने लगा।

विनोद प्रिय मानव ने व्यथा को दुलराया, विपदाओं को विनोद में डुबाया, और अपनी चिन्ताओं को उसमें भुलाकर जीवन तरी को हलका कर डाला।

शुष्क और सूने विश्व मे विनोद बीणा बन कर झकार उठा। मानव ने हृदय खोल कर उसका अभिवादन किया।

निशि के प्रथम प्रहर मे, सुधांशु की शुभ्र निर्मल छिटकती चादनी मे, मादिल मधुशालामे, मधु के इच्छुकों से घिरी, धवल धोत सी मसनद पर बैठी, कनक सी सुगन्धित कामनी अपने शशि मुख से मधुशाला को जगमगा रही है। सामने जलते हुए शमअ की सुनहरी आभा से उसकी दुति द्विगुणित हो उठी है। उसने मृदुल की भुज वल्लरियों को उठा कर नवनीत से चिक्कन सुकोमल करो से मधुपात्र उठाया, और मनोहर सी सुघर थाली मे मधु उडेलने लगी। प्याली भर चुकने पर मृदु मुस्कान से, खिलते नयनों से, हुलसते हृदय से प्याली को आगे बढाया। मधु तृषित मानव मण्डली सिहर उठी। उसने पुलक कर प्याली लेनी और खाली कर देनी आरम्भ की। क्षण क्षण में प्याली भरती और खाली होती रही।

मधुबाला ने अपने मधु के मद में उन्हें मत्त कर दिया। मत्त हुए मानव झूमने, गिरने और लुढ़कने लगे, किन्तु मद में डूबी मधुबाला सचेत रही। उस तक मद की एक भी लहर नहीं आई। मद उसे छू न सका। वह उसी प्रकार दृढ अचल सी पूर्ववत् अपने कार्य मे लगी रही। मानों मानव को ही बेहोश करना उसका काम हो। जल से कमल की भाति मधु से विलग रहना ही उसका ध्येय हो।

जब समस्त मडली के मानव बेहोश हो कर इस प्रकार छितरा गये, जैसे नभाङ्गन में शशि के निकट बुझते, झमकते, छिटकते से तारागण। तब साकी कटि पर सुकोमल कर रख कर विजेता सी गर्व से मुख ऊंचा कर खिल खिलाई। दूसरे क्षण

मुह बिगाड़ कर चली--रे मतवाले ? भोली नारी का मद पीकर उसे ठुकराने वाले निष्ठुर मानव ! तू इसी योग्य है।

मैं साकी, विश्व की सरल हृदया दुखिनी नारी का प्रतिकार चुका रही हू। देख नारी के भयकर रूप से अनभिज्ञ आँख खोल कर देख, तू पद दलित है॥

लघु से वृहद, और वृहद से लघु होना विश्व समस्या है।

स्वर्ण निर्मित नीलम मुक्ता जड़ित सुघड़ सी मञ्जुल प्याली में तरल मादिल गुड़हर के फूल सी अरुण सोम अपने स्नेहिल रक्तिम उर मे अपने प्रणयी की छवि देख अधर रस पान के लिए विकल हो उठी। उसने मन ही मन कहा कि मेरा व्यवहार भी कैसा अनूठा है। मैं एक पल को भी उसके अधर से अलग होना नहीं चाहती, और न वह मुझ से विलग होना चाहता। उसकी और मेरी प्यास अजय सी हो गई। वह मुझे देखकर विकल हो जाता है। मैं उसे देखकर और भी मादिल हो उठती हूं। मैं सुनहले पात्र में खिलती हू, वह मुझे देखकर खिलता है। मैं उसके मानस मे पहुँचते ही अपना प्रीतिबिम्ब उसके नयनों मे झलका देता हू। मधु प्यासा निरख मुझे उसके नयनों में देखता है, और मुलक कर मेरी ओर लपकता है। मैं उसे आनन्द म विभोर कर झुमा देती हू। बेहोश कर देती हू। जिससे विश्व के सारे झञ्झट मेरे आलिङ्गन में बाधक न हों। फिर हम दोनों एक प्राण होकर विहार करते हैं। उस पल वह विश्व को, अपने धन जन सबको भूल जाता है, और थिरक थिरक कर शक्ति से अधिक मेरा सेवन करता है। दोनों हाथों धन लुटा कर मुझे छाती से चिपकाये नि शक्त होकर अचेत हो जाता है। मदिरा खिल खिला उठी।

दूसरे क्षण उसे फिर विचार आया कि मानव के सर्वनाश की जड़ भी तो मैं ही हू। उसके हृदय को ही नहीं फूकती प्रत्युत उसके धन जन सभी को स्वाह कर देती हू। उसके कुटुम्बी बिलख बिलख कर मुझे कोसते हैं। शापते हैं। नन्हे नन्हे दूध मुहे

बच्चे भूखे प्यासे बिलखते रह जाते हैं, किन्तु वह दरिद्र भी इनकी चिन्ता न कर मेरी ओर लपकता है। मुझे पाकर ही वह अपना कलेजा ठंडा कर पाता है। और धनिक? धनिक की इज्जत आबरू पर तुषार पात करने वाली भी मैं ही हूं। इतना सोचते २ वह कांप उठी। अपने काले कारनामों को जलते हृदय से देखा। वह भभकी और प्याली से उलट पड़ी। प्याली और मानव के हृदय के टुकड़े २ कर आप कण कण में मिल गई।

विदित नहीं मानव ने उस मार्ग को छोड़ा या नहीं? मदिरा का संकेत तो यथेष्ट था।

रजनी के निर्जन पहर में मधुशाला के टिमटिमाते दीपक के मद प्रकाश से सुघर भोली सी प्याली पर मधु तृषित मानव ने पास के कुछ मुद्रा निखेर कर उसे उठा लेने को हाथ बढ़ाया। प्याली झनझना उठी। मानव ने हुलसते पुलकते हृदय से उसमें मद उड़ेलना आरम्भ किया। प्याली के हृदय मे बुद बुद से फूले। वह मतवाली होगई, और पल्लव से सुकोमल गुलाबी अधरों का ,स्पर्श पाते ही पुलक उठी। न जाने कितने प्राणी ललचाई दृष्टि से देखते हुए बार बार उसे लेने को हाथ बढ़ाने लगे। प्याली अपने भाग्य पर गर्वा उठी।

किन्तु दूसरे ही क्षण मदमाते मानव ने अपनी प्यास पूरी कर कंपित करों से उसे धरा पर पटक दिया, और ठुकराता हुआ आगे चला गया। प्याली ने एक आह के साथ अपने क्षणिक नश्वर जीवन को समाप्त किया और मानव का क्षणिक जीवन का श्राप दे चली। तब से आज तक नश्वरता और क्षणिकता को मद के आवरण में छिपा मानव भटकता सा आ रहा है।

खिलखिलाती शुभ्र ज्योत्स्ना के निबिड अधकार भेदन का विफल सा प्रयास देख कर मधुशाला खिलखिला कर कह उठी। री भोली भला मेरे भीतर खिले विद्युत प्रकाश के सामने तेरी क्या हस्ती है। तेरी आभा फीकी करने को तो मेरी साकी चन्द्रमुखी ही यथेष्ट है। जा शशाक को लेकर जलधर की ओट होजा।

पहर दो पहर बीतते न बीतते म्लान मुख ज्योत्स्ना जा छिपी। मधुशाला गर्वाई। सामने मद्य इच्छुकों को आते देख, वह फिर सोचने लगी। यह दीन मानव किस प्रकार मेरी ओर दौडे चले आते हैं। मानों साकी उनकी आराध्य देवी हो और मैं उनका उपास्य स्थल। साकी के हाथ से मधु प्याला लेते हुए मानव ऐसा लगता है मानों अग्निदेव प्रसन्न होकर राजा दशरथ को खीर पात्र देते हों।

पुजारी अपने इष्टदेव मे तल्लीन हो झूमने लगता है। विश्व के दुख सुख और उसके प्रपच से कुछ क्षणों को ऊपर उठ जाता है। उसी प्रकार यह भी अपनी देवी मधुबाला मे मस्त हो झूम उठते हैं। इन्हें कोई सुधि नहीं रहती। ससार के समस्त झंझटों से छूट कर मस्त हो जाते हैं, और साकी? साकी भी वरदान दायित्री सी एक निष्ठ अपने कार्य मे लगी रहती है। उसका कार्य मानों महामाया से भी बढकर है। यह सबको संतुष्ट करती है, और महामाया किसी किसी को।

विषयी, मद्यपि और दुखी प्राणी को मेरा स्थान सर्वत्र शान्ति और आनन्द दायी है। मैं उसकी रगस्थली हू। विश्व

जब सोता है, मैं जागती हू। निरय जब रोता है मैं हँसती हू। मेरी मस्ती विश्व में अनूठी है।

मधुशाला गिली, किन्तु दूसरे ही क्षण मानव का आहुति कुड अपने को समझ, वह टीस उठी। सामने समिधा के रूप में मानव को लुढ़कते देख वह सन्न रह गई।

मधुशाला ऐसी विदित हुई 'विपरस भरा कनक घट' जैसे।

पतझड की भाति अपने योवन को गिरता हुआ देख कर जरा और मृत्यु के सधिस्थल पर खडे मानव के नयन अधिया गए। सर्वांग मे शीतलता छा गई। हृदय सूखे पत्ते की भाति सिकुड कर खड़खड़ाने लगा। अपने बलशाली भुजदडों को कापते हुए देख कर, और प्रत्येक श्वास को क्षणिक सी समझ कर उसके मानस में स्मशान सा जग उठा। आशा और अभिलाषाओं के चित्र मिटते से नजर आने लगे। कमनीय कामना रगीन तूलिका चलाती हुई भागती दीखने लगी। मोह मचल कर हिलाने लगा, और अपने सब्ज बाग मे फसाने की चेष्टा करता हुआ विचित्र सा प्रतीत होने लगा।

जरा पीडित मानव ने दृष्टि फैला कर साश्चर्य विश्व को ताका। सूखे कठ से तृष्णा की ओर देखा। अपनी दयनीय स्थिति पर दृष्टिपात कर एक आह भर कर वह कहने लगा—मेरा मन, मानस, मेरी भावना और विश्व तो वही है — ?? मेरे आत्मीय मेरे होते हुए भी पराये से क्यो हो गए? और मन, मन फीका सा नजर आने लगा। भावना कुचली सी, और विश्व क्षणिक सा, बटोही सा, किन्तु अरे विश्व क्षणिक नहीं। मानव जीवन क्षणिक नहीं। क्षणिक है वपुष। इतना सोचते सोचते मुख म्लान हो गया। एक लम्बी श्वास लेकर कहने लगा, वास्तव में मृत्यु के पौर पर खडे हुए को सब क्षणिक ही प्रतीत होता है।

विगत सर्वस्व की याद में जरा युक्त मानव के नयन छलछला आये। कपित करों को मलते हुए क्रमश वह अपने

विगत चित्रों का सिंहावलोकन करने लगा । कभी मुलकने, कभी सिहरने और कभी तड़पने सा लगा ।

कौन जाने कौन से चित्र में, कौन सी श्वास उलझी हुई उसे कब तक झुलाये गई, अथवा कब झटक कर टूट गई । किन्तु विश्व के रंगमंच पर अवश्य किसी रेखा में शून्यता नहीं आई ।

घनीभूत केश राशि से काले काले सघन जलद पटल को चीरते हुए अपने उच्छ्वास से कण कण को दूर फेंकते हुए, अपने क्रूर अगार से जलते हुए नयनों का प्रकाश फैलाते हुए, अपनी तीखी और दीप्तिमान दन्तपंक्ति को खिलाते हुए काल ने अपनी असीम बलशाली भुजाओं को फैलाया, और सगर्व चारों ओर को दृष्टी पात किया। क्षण भर में नभथल में शून्यता छा गई। वह अपने आतंक और बल पर मुस्करा उठा। अपने काले २ कुंतल को छितरा कर, सुडौल सचिक्कन सी भयानकी मुद्रा से अपने स्थूल शरीर को हिला कर, सुदृढ़ कर की गदा को घुमा कर अपने बल का तौल नाप करने लगा।

क्षण भर में विश्व का सिंहासन हिलने लगा। काल ने ठहाका लगाया। दिग्गज गूंज उठे। दिशायें थर्रा उठी। धीरे से फिर उसने अपना स्वरूप संभाला। सोचा अभी क्षण भर मे प्रलय हो जायगी। भगवान अपना बोरिया बन्धना बांधते नजर आयेंगे। आहा भगवान भी कितने भोले भाले और भले हैं कि विश्व की रज्जू मुझे पकड़ा कर आप भी अर्थात् मेरे आधीन हो गए। पलभर में मैं उनकी लीला मिटा दूं, अथवा रखलूं अ ह ह ह करके वह जोर से हँसा।

हंसी के खिलते प्रकाश में भगवान की मोहनी मूर्ति देख कर सिहर उठा। स्वत ही नमस्कार को कर उठ गए। वह सिटपिटा कर इधर उधर ताकने लगा। मस्तक उठाकर देखा तो विश्व में शान्ति विराज रही है। उसका कार्य ज्यों का त्यों

रहा है। वह सकुचाया सा कुछ लज्जित हुआ। सोचने लगा मेरा बल, मेरा गर्व सब वृथा है। भगवान के आदेश के बिना मैं क्या कर सकता हू।

पल भर विचार मग्न होकर कहने लगा, क्यों नहीं समार भर में तो मेरी सत्ता सर्वोपरी है। मेरे भय से प्राणी मात्र के प्राण सूखते हैं। मेरी दृष्टी पड़ते ही वह अपने को भस्मसात ही समझता है। चलू देखू विश्व को। कौन मरणासन मेरी बाट जो रहा है। कौन सिसकते हुए प्राणों से छट पटा रहा है। देखू तो। मेरा धर्म भी कितना अनूठा है। किसी के घर को उजाड़ कर किसी के घर को बसाता हू।

काल के परोक्षमय कार्य को विश्व ने जाना भी नहीं किन्तु उसकी छाप प्राणी मात्र पर लगी है। समय २ पर चेतावनी ही नहीं देती, प्रत्युत् कभी कभी तो उसकी साकार मूर्ति सी खड़ी कर देती है।

जीवन और मृत्यु ससार के आवरण पर अभेद है।

चमकते प्रभात की मधुर वेला में, उल्लास भरे मानस से दुग्धफेन सी धार पर अटखेलियां करते हुए उज्ज्वल कपास वर्णी हंस अपनी मृणाल सी ग्रीवा को उठा कर अपने मृदुल मुख की चतुरी चचू में जल भर कर क्षितिज से आती हुई धवल वसना हिममुखी वीणापाणि के अरुण चरण कमल को अभिसिक्त करने के लिये उद्वेलित हो उठा।

वीणा बजाती हुई शारदा धीरे से निकट आई। वीणा की झंकार से उसकी हृद् वीणा झनक उठी। उसके चरण तल पर लगे स्निग्ध नयन अरुण हो उठे। प्रेमाधिक्य से चचू का जल बिखर पड़ा। वह चित्र लिखा सा खड़ा रहा गया।

वीणापाणि ने मुलक कर एक प्यार की थाप उसकी पीठ पर लगाई। उसकी समाधि भंग हुई। उसने नयनों को झुका कर दो मुक्ता चरणों पर चढ़ाये, और एक फुरहरी लेकर गात को समाल अपने इष्टदेव के साथ विश्व से ऊंचा उठ गया।

मन गगन से भी ऊंचा गया। गति समीर के साथ जुड़ गई। भावना अमर लोक में जा रमी। हृदय इष्ट में थम गया।

साधना, साधना होती है। लघु की हो या दीर्घ की। सिद्धि सम्भावित है।

कुसुमित नील गगन के प्राङ्गण से विद्युत सी, धवल वसना सुकुमार चन्द्र वदनी, अपने चन्द्रानन से मार्ग को आलोकित करती हुई देवागनाओं को लज्जित करने वाली वीणापाणि मथर गति से कलरव पूरित विश्व तल पर उतरी, और अपनी नवनीत सी कोमल चम्पक कली सी अगुली से कठोर मी वीणा का स्पर्श किया। मृदुल पखुरी सी अगुली के स्पर्श से वीणा सिहर कर, लचक कर, झनझना उठी।

वीणा के विश्व की झकार विश्व भर मे भर गई। वीणा के विश्व में प्रभात खिला। वीणा के सपने सजग हुए। वीणा मुलक कर उनमे जा मिली। सपनों की साध मिटी। प्यासा उर तृप्त हुआ। वीणा ने अपने स्वर से विश्व मे जीवन फूका। विश्व ने वीणा को प्राणों से लगाया। वह उसके विलास की सामग्री बनी।

वीणा तन कर, खिच कर इठलाने लगी। मधुर वीणा ने विश्व मोह लिया। उसके प्रति तार मे विश्व की श्वास उलझ गई। उसकी एक एक झकर से मानव झनझना उठा। पशु विमुग्ध हो गये।

मानव और वीणा के तार एकाकार होते हुए विश्व ने देखे। *खिलते हुए विश्व को देख वीणापाणि मुलकी।*

विश्व के चमकते प्रांगण से हट कर एक छोटे से कोण में धूमिल वसना विधुरा अपनी उष्ण श्वास प्रश्वास से अंधियारी काली निशा का साम्राज्य सजाने लगी। उसकी समस्त चेतना सुषुप्त थी। उसकी आशा के चमकते, छिटकते तारे बुझ बुझ कर गिर रहे थे। उसकी मंजुल भावना तड़प कर अंधकार में जा मिली थी। उसके हृदयाकाश का चन्दा बदली में जा छिपा था।

अन्तर बाहर के अंधियारे से मलिन मुर्झाये नयन मुंद गये। शीतल हुआ सर्वांग डरावने भविष्य को देख कांप उठा, तड़प उठा। चीख उठा।

उसकी गगन भेदी चीख से दिशायें विह्वल हो उठी। सभीत पक्षीगण थर्रा उठे, किन्तु उसके आत्मियों ने उपेक्षा से एक उष्ण श्वास ली।

उपेक्षिता के प्राण विह्वल हो उठे। अपने उजडे साम्राज्य को अविरल आंसूओं से अभिसिक्त करने लगी। विगत प्रिय पर अपने मानस की निधि न्योछावर कर डाली। अपने प्राणों का कोना कोना खाली कर डाला, और निष्प्राण जीवन को स्मृति मात्र रख डाला।

यह था नारी हृदय का खिलवाड। यह था नारी का नारीत्व, और उसकी महानता। जो तृणवत् मानव के चरणों पर चढ़ा दी।

विश्व ने अमर प्रेम की छाप नारी पर लगी देखी।

सुधांशु से सार ले, विमल चन्द्रिका से लास ले, मृदुल अरुण कुसुम से रंग और सुवास लेकर, नीलम के कणों को कूट कर, मुक्ताहल की पुट से विधि ने खेल ही खेल में रूपसी का निर्माण कर डाला।

रूपसी को देख विधि चकरा गया। उसके नयन चौंधिया गये, और गात स्तम्भित हो गया।

एक क्षण में स्थिर होकर सोचने लगा, विश्व इसे कैसे सभालेगा। उसकी दशा — वह काप उठा। किन्तु अब अब तो इस अलभ्य पदार्थ को विश्व को देना ही होगा। आहा — इस धरा के शशि को देख विश्व भूल जायगा, मतवाला हो जायगा, डूब जायगा। विधि ठठा कर हँस पड़ा।

रूपसी मुस्करा कर विश्व में उतरी। मानव ने चकित नयनों से उसे देखा। चाँद में नीलम मुक्ता जड़े देख, वह स्तम्भित सा रह गया। रूपसी पुलक उठी।

उसके लास में विमल चन्द्रिका खिलती हुई देख वह उसमें डूब गया, लुट गया। उसका हृदय धड़क उठा। प्राण पुलक कर सिहर उठे। उमग से सुधारस का पान करने लगा, किन्तु उसकी प्यास न बुझी, न बुझी।

अपने मद ढले नयनों को नीलम वर्णी नयनों में गड़ा कर दृष्टि भेद मिटा देना चाहा, और जलते हृदय को लास से

छिटकती चन्द्रिका से शीतल कर सुधा ढले अधरों से अपनी प्यास मिटा देनी चाही, परन्तु सब मृग तृष्णा, सब छलना।

अलभ्य रूप पर मानव ने सर्वस्व न्योछावर किया। उसकी साध, उसकी प्यास अमिट हो गई। वह जलती शमश्र का पतग बना।

अद्वितीय रूप ही विश्व का गौरव है। उसके सजग प्राण रूप से लक्षित हैं।

रूप पर मरने, मिटने और मतवाला हो जाने वाला मानव, एक क्षण में, एक झोंके में विश्व को भूल, रूप मे डूब जाता है। लीन हो जाता है। रूप में उसका जीवन, प्राण और विश्व बसा है। रूप सुधा की प्यास प्रतिक्षण, उनके नन्हें कलेवर में सजग होकर पनपती रहती है।

लचीली लतिका में खिले किसी कुसुम पर मुग्ध हो जाता है। कहीं जगली मृग शावक के भोले छौंने के सौंदर्य में लुभा जाता है। कहीं धेनु के नवजात सुकुमार शिशु मे, कहीं डाल पर बैठे भोले पक्ष के रूप मे प्राण डुबा देता है।

कण कण के रूप का प्यासा मानव किसी नारी के रूप पर मतवाला हो उठता है। प्रतिक्षण रूप सुधा का पान करते करते उसकी प्यास अमिट हो गई। मोहक रूप को देख कर उसका मन खिल उठता है, प्राण पुलक उठते हैं, उमग से गात सिहर उठता है।

रूप के आगे उसे अपना जीवन भी तुच्छ प्रतीत होने लगता है। यह है रूप के प्यासे मानव पर रूप का प्रभाव।

रूप सुधा मानव के लिये सुधा ही नहीं, प्रत्युत गरल भी है।

सृष्टि के आदिकाल में, दैत्य दानवों के समुद्र मथन से से विकल हो कर, मानस की उत्ताल तरंगों को चीरकर, रत्नाकर के गर्भ से अरुण वसना कोमलाङ्गी चचला विश्व में आई।

पास खड़े मृदुल कमल पर कमलासन लगाया। अरुण कमल की आभा मे उसकी द्युति द्विगुणित हो गई। चचला पुलक कर विश्व को निहारने लगी।

विश्व चकित होकर साश्चर्य चचला का स्वागत करने लगा। उसके सरल विमल उर मे माया जगी। वह चचला को पाने के लिये विकल हो उठा। उसकी कामना अमित हो गई। अपने अकथ परिश्रम से उसकी ओर बढने लगा।

चचला सकरुण होकर मुसकाई। मानव के मुर्झाये नयन, हारा हृदय और बुझा विश्व खिल उठा। उसके प्राण ऊर्ध्वलोक मे विचरने लगे। उसकी भावना गर्वा कर गगन विहारी हो गई। उसकी कामना ने पख फैलाये। दृष्टि मे मानव के प्रति विभेद उत्पन्न हुआ। माया मिश्रित मन कठोर हो चला। विमल कोमल भावना शुष्क हो चली। चंचला से सतेज सजग हुआ मानव अत्याचार की साकार प्रतिमा बन गया।

चपल चंचला का मन चचल हुआ। कठोर मानव के सहवास से ऊब चला। अस्थिर चचला सतेज गति से चली। उसने पीछे फिर कर भी न देखा।

निस्तेज हुआ मानव तड़प उठा। उसका खाली ठगा हुआ

मन करुणा मे डूब गया। पतनो-मुखा प्राण अन्धकार मे डूबने लगे। विश्व घूमता सा नजर आने लगा।

धीरे धीरे दृष्टि भेद का आवरण तार तार हो कर बिखर गया। उसकी विमल भावना लौट आई। करुणा सजग होकर हिलने लगी। सरल मानव, मानवता को देखने लगा।

चचला और मानव के सौतिया डाह को विश्व ने देखा।

प्रभात की मुग्धकारी वेला मे, दुधारी धेनु को चराते हुए नट नागर ने उमग मे भर, वन खण्ड के निर्जन मे लहराते हुए हरित धास को मकरुण दृष्टि से देखा, और हुलस कर उसका एक टुकडा ले मुरलिका बनाई। चर अचर को मोहने के लिए। प्राणों को समोहने के लिये।

चिर साधना वाली, युग युग युग की प्यासी खाली हृदया मुरलिका सुकोमल करों के स्पर्श से सिहर उठी, पुलक उठी।

नट नागर मुलक कर मदढले नयनों से प्यार छलका कर प्राण उडेलने लगा। उसे चूमने लगा।

मधुर अधर रस पानसे मुरलिका किलक उठी, नाच उठी। अपने अमर राग से अणु अणु मे प्राण भर दिये। जीवन फूक दिया।

डाल पर बैठे भोले पक्षी चकित हुए। वत्स के मोह मे डूबी, हरित तृण से मुख भरे धेनु स्तब्ध होकर नट नागर को निहारने लगी। मृग छौने जहा के तहा ही चित्रवत से रह गए, और नर नारी विकल होकर सुधि ही खो बैठे। उनके प्राण मुरली मे समा गये, रागविराग मधुर राग मे और जीवन नट-नागर में मिल गया।

नट नागर हँसे, खिले और झूम कर मुरलिका के राग को सतेज किया। विश्व गूज उठा। कण कण से मधुर राग निकलने लगी।

सुधि खोकर नटवर भी नाच उठे। उनकी ताल ताल पर विश्व भी थिरकने लगा।

विमल भावना से विश्व ओत प्रोत हो गया। नटवर का खिलवाड, मुरली और राग अमर हुए।

यामिनी के स्तब्ध पहर मे अर्ध सुषुप्त अवस्था में सरल सुकुमार गोपिका स्वप्न देखने लगी। अपने प्रणयी श्याम को ग्वालों के साथ क्रीड़ा करते देख, धीरे से पीछे से लपक कर अपनी कोमल कजकली सी अँगुलियों से श्याम के मदढले विशाल नयनों को मूंदने के लिए ज्योंही उन्हें बढाया कि उसके नयन खुल गए। वह जाग कर चकित नयनो से चारों ओर देखने लगी।

विकल होकर छल छलाये नयनों से यामिनी से पूछा कि श्यामा, तेरे अनुहार मेरे श्याम को कहीं तूने तो अपने काले कलेवर मे नहीं छिपा लिया ?

प्रणय के असाध्य रोग से जडित देख यामिनी उसकी विक्षिप्त दशा पर दो आंसू डाल कर स्तब्ध ही रह गई।

गोपिका के नयन छलक पडे। अश्रु मुक्त से आंचल भरने लगी। प्रिय को अभिसिक्त करने के लिए, चरण भेंट राजोने के लिए। अपने कोने २ के मुक्ता को इकट्ठा कर निशानाथ मे, तारों में, विमल चन्द्रिका में श्याम को ढूंढने लगी। श्याम, श्याम की रटन में प्राण समो डाले, निचोड़ डाले।

कुछ क्षणों तक समाधिस्थ सी रह कर निशा मे ही बौरी गोपिका गागर उठा कर यमुना तट की ओर चल पडी। प्रेम के आधिक्य से, प्रेम की तन्मयता मे भूली गोपिका को भान भी न हुआ कि निशा बीत चली है या नहीं।

यमुना घाट पर खड़ी गोपिका अपने मधुर कंठ से श्याम को पुकारने और यमुना की लहरों में नेत्र गड़ा कर ढूंढने लगी।

विवश, अधीर हुई गोपिका घाट पर मस्तक टेक कर सिसक उठी। सिसकी के धीरे शब्द में गोपिका को बन्शी की धुन सुनाई दी। उसका हृदय धड़क उठा। प्राण मान मनौवल को व्याकुल हो उठे। गात पुलक कर शिथिल सा हो गया। उसका मन श्याम में समा गया। वह भूल चली विश्व को, विरह ज्वाला को, अपनी सकरुण दयनीय विक्षिप्त दशा को।

मधुर भोर में गोपिका ने जब मस्तक उठाया तो श्याम को चाव भरे, प्यार भरे नयनों से निहारते पाया।

गोपिका फूल उठी। साध पूरी हुई। कामना फलित हुई। गोपिका श्याम बनी। श्याम गोपिका।

दोनों के अनन्य अमर प्रेम से विश्व ओत प्रोत हो गया।

आचार विचार भ्रष्ट, क्रूर भावनाओं मे डूबे हुए विश्व को देख कर उसके हाहाकार, अत्याचार से ऊब कर और धरा को कापते हुए देख कर शेपशाई भगवान विष्णु ने सक्रोध भूत भावन शकर की ओर देखा।

शकर की नासिका पुट फडकने लगी। तीव्र उष्ण श्वास से लता पल्लव भस्मसात होने लगे। क्रोध के प्रगाढ से तृतीय नेत्र खुल पड़ा। उसकी तीक्ष्ण ज्वाला से विश्व जलने लगा। क्रोध के आधिक्य से जटा की गगा बुल बुला कर हरहरा उठी, और आबाध्य रूप होकर उसने विश्व को जल प्लावित कर दिया। जल मग्न कर दिया।

कठ मे पडे विषधर प्रलय काल देख भयभीत होकर शंकर को कसने लगे। शकर ने जलते नयन से उन्हें देखा। वह खड खड होकर गिरने लगे। जलने लगे।

शकर की जटा खुलकर जल विहारणी हो गई। अग के आभूषण टूट टूट कर वह चले। वृषभ और कमण्डलु भी साथ छोड चले।

जल मे खडे शंकर ने वक्षस को तान कर जल मग्न विश्व को देखा। शून्य और रव, जल और थल सब एकाकार थे। केवल विशाल अनन्त जल राशि पर लीलामय को क्रीडा करते हुए देखा।

शकर ने मस्तक झुकाया, और मुलक कर अपने सुदृढ करों से जटा का बांध गगा को समा लिया। नयनों की ज्वाला शान्तकी।

शंकर और विष्णु की मुस्कान सृष्टि रचना का कारण बनी।

विश्व से विरक्त, तटस्थ होकर, विमल विरस भावनाओं में लगा, अमर चाह को केन्द्रीभूत कर, अनन्त के एकीकरण की लालसा प्राण में समेट कर, भव की तुच्छता सामने रख जिज्ञासु समाधिस्थ होकर भ्रकुटि के मध्य में प्राण को एकाग्र कर शून्य में लौ लगा कर निश्चल हो गया। अनन्त में मिल जाने को, रम जाने को।

वाह्य चक्षु मूंद कर उसने ज्ञान चक्षु खोल डाले। भीतर के तीव्र प्रकाश से उसके प्राण ओत प्रोत होने लगे। निज की, भव की सत्ता प्रगाढ विस्मृति में मिल गई। भीतर का प्रकाश आवरण चीर कर मुख मण्डल पर झलकने लगा। वह शून्यवत् हुआ शून्य में मिलने लगा।

भृकुटी के मध्य में उसकी अमर चाह खिलने लगी अपने इच्छुक तेज पुंज को मुस्कराते देखकर उसके पिपासु अधर पुलक उठे। प्राण हुलस कर चरणों में जा लुटा। जा बिका। जीवन, जीवनधन में समा गया। नश्वर देह विश्व में छोड़ दी।

साधक के अमर प्रेम के चिन्ह पर विश्व ने अञ्जली भर फूल चढ़ाये, और उसके अनन्य प्रेम को अनन्त का मार्ग प्रदर्शक बनाया।

विमल भावना मे मानस समोकर, ऊपर उठती हुई भव्य भविष्य पर थिरकती हुई आशा को लेकर साधक की भाति वत्स मे एक निष्ठ सुरति लगाये हुए, कुशल नारी कार्य कर्म मे लगी हुई मुलक पडी। भूल पड़ी वत्स के चॉद से मुखड़े मे। लौनी छटा में।

उसके पयोधर छलक पडे। हृदय हुलस पडा। नयन पालने मे जा लगे। वह मन ही मन अपने शिशु से बतियाने लगी। हाथ का कार्य ढीला पड गया, जब ममत्व से उसके प्राण पुलक पडे।

उसने ललक कर कोमल पखुरी से अधरों का चुम्बन लिया। वह सुधा पान से विभोर हो उठी। चुम्बन मे उसका विश्व खिल पडा। प्राण सजग होकर लहरा उठे। कामना से मन गर्वा उठा। साध बिखर कर मचल पड़ी। छलक पड़ी।

शिशु को छाती से लगा कर अपना जीवन उसमें उडेलने लगी। अपनी साध, आशा कामना को एकाकार करने लगी। भावना का प्रतिबिम्ब देखने को। साकार आशा देखने को।

क्रूर दैत्यों के संहार का भार उठाये हुए, साधक की साधना को सफलीभूत करने को, भय ग्रसित धरा का उद्धार कर मोहक विश्व को निखार देने को, खिला देने को, भगवान कृष्ण विश्व में आये।

धरा ने पुलक कर, खिल कर उनका स्वागत किया। उसका अणु अणु अंकुरित हो कर कोमलतर चरण कमल पर लोट गया, लुट गया। न्योछावर हो गया।

सरोष दृष्टि से पापात्मा दैत्यों की ओर कृष्ण ने देखा। उनका अत्याचार भागने लगा। वह उलूक से, भय के आवरण में छिपने लगे, किन्तु कृष्ण की तीक्ष्ण दिव्य दृष्टि से न छिपे, न बचे।

समाधिस्थ साधक ने मग्न होकर श्रद्धाञ्जलि चढ़ाई। मजुल भावना में भीगे प्रेमाश्रु से अभिषेक किया। गुणानुवाद गा कर अभिवादन किया।

कृष्ण खिले। विश्व खिला। डाल पर बैठे पक्षी, वृक्षवृन्द खिले। विश्व का कण २ खिल उठा। गोरस युक्त गोपिकाये खिल कर मोहक कृष्ण में आ मिली। धेनु हुमक कर दुधारी हो चली, जब कृष्ण ने कृपालु दृष्टि से देखा।

उद्देश्य की पूर्ति मे लगे वर बद्ध कृष्ण ने अपनी समस्त विमल विशाल भावना विश्व में समो दी। निचोदी।

विश्व उभर कर, निखर कर अपने पोषक उद्धारक के अनुहार मोहक हो उठा। विश्व के रोम २ में उसकी छवि झलक उठी। विश्व मे कृष्ण, कृष्ण मे विश्व रम गया।

मान, अभिमान की होली करके, कामनाओं को मसल कर, सोई सोई सी भावना लेकर, हलकी सी आशा के सहारे, चीर चीर हुए जीर्ण वस्त्र से लज्जा को ढके हुए फुटपाथ पर बैठी भिखारिन ने सकरुण सयनों से राहगीर के सामने अपना दुर्बल हाथ पसारा।

दयार्द्र होकर राही रुका। करुणा की साकार मूर्ति को देख वह विकल हो उठा। भोले आर्त मुख के निष्प्रभ से सौंदर्य मे उसके प्राण हिला से दिये। एक लम्बी श्वांस लेकर स्निग्ध नेत्रों से देखते हुए जेब से एक रुपहली मुद्रा निकाल कर कहा—लो।

लो के साथ ही भिखारिन के हृदय में धक से लौ उठी। वह सनसना उठी। मान भरे लो से उसका भान जाग उठा। उसने सगर्व राही से मुद्रा लेकर मुस्करा दिया, और एक कृतज्ञता भरी दृष्टि से देखा।

राही ने प्रसन्न होकर एक सन्तोप की श्वास ली, और आगे बढ चला।

जीवन का अवसान हो आया। जीर्ण वस्त्र के साथ भिखारिन का छलकता यौवन भी जीर्ण हो चला, किन्तु उसके हृदय मे अहर्निश "लो" का शब्द गूंजता रहता है। एक कृपण की भांति इस "लो" को हृदय में छिपाये अनन्त घड़ियों से उसी फूटपाथ पर बैठी मार्ग में नयन बिछाये उसी कृपालु स्नेही मुखड़े को ढूंढ़ती रहती है।

शीत से ठिठुर कर बुझते हुए प्राणों से शिथिल हुई रुग्ना भिखारिन के मुर्झाये नयनों पर उसी कृपालु मुखड़े की छाया पड़ी। रुग्ना ने सचेत सी होकर नेत्र पसारे। फैले हुए पथराये नयनों पर वह छवि अमर हो गई।

कृपालु राही ने दो बूंद साध्या के चरणों पर चढ़ाये, और उस दयनीय अवसान को हृदय मे छिपा कर रख लिया।

मीठी स्मृति के लिये। सपनों मे पहेली बुझाने के लिये।

अस्थि पिंजर मात्र शुष्क गात में, अमित साध छिपाये हुए, मृदुल मृदुल भावना हृदय में सजोये हुए, भविष्य के सुनहरी सपनों में उलझा हुआ, चाव भरा दीन किसान धरा को उर्वरा कर के बीज चोपने लगा। प्राण बोने लगा।

लालसा भरे सतृष्ण नेत्रों से नित्य जलधर का आवाहन करता। उससे अनुनय विनय करता। जलधर ने उसकी साध पूरी की। वह पुलक कर खिल उठा। नयन नाच उठे, और जीवन हुमक उठा। उसकी आशा खिलकर धरा पर निखरने लगी। धरा ने फूल कर अमित वैभव उसके शुष्क चरणों पर चढ़ा दिया।

कल का दीन आज का साहू–किसान कोमल पौदों के साथ साथ लहरा उठा। गर्वा उठा। उसकी भावना किलक कर फैलने लगी। उसकी कामना बासन्ती हो उठी। वह मन भावन भवन बनाने लगा।

धरा के ठेकेदार दस्यु ने ललचाये नेत्रों से उसके वैभव को देखा, अरुण क्रूर नेत्रों से किसान को उसने मुलक कर आनन्द में मग्न बैठे किसान के कंधे पर हाथ रखा।

उसे देखते ही किसान की श्वास रुकने लगी। मुख सफेद पड़ने लगा। गात शिथल होने लगा। वह अवाक हुआ शिथिल सा हो गया।

सक्रोध मुद्रा से जमीदार ने उसे हिलाया उसके भवन

को ठुकराया, और उसकी भावना को निदरा कर उसकी आशा को मसल डाला।

उसने धड़कते सूने हृदय से सुना कि "फसल का चौथाई तुम्हें मिलेगा"। उसे अपने रक्त की गति बन्द होती दिखाई दी। आँखों में अन्धियारी छा गई। हृदय की हूक से प्राण तड़प उठे। अन्ततः मलिन मन से थाती की देख रेख करने लगा।

उसे कुम्हलाया देख, उसकी अवज्ञा देख बहुत से कोमल पौदे मुर्झा कर सूख चले। बाकी बचा वैभव दस्यु के हाथ लगा।

बेचारे किसान का हृदय टूक टूक हो गया। उसका वैभव आँखों देखते लुट गया। उसकी आशा अभिलाशा धूल धूसरित हो गई। नयनों ने छलक कर बाकी बचे वैभव को भी लुटा दिया। खाली हुआ पिंजर भर भरा कर गिर पड़ा।

समाधिस्थ अस्थि पिंजर पर विश्व अश्रु मुक्त के दो फूल चढ़ा कर आगे बढ़ गया।

जीवन प्रभात उसने देखा ही नहीं। चाह, आशा अभिलाषा गूलर का फूल हो चली। मंजुल भावना अंधकार में जा मिली। मनुष्यत्व मलीन होकर मुर्झा चला। स्वत्व को त्याग कर वह केवल क्षुधा निवृत्ति के हेतु जीता है। चलता है।

दुर्दैव के अघातों से पिस कर वह भूल चला है कि मानव क्या है। उसकी सत्ता, उसकी शक्ति क्या है। उसकी आशा अंकुरित होकर तत्काल ही विनष्ट हो जाती है। वह खाली सूने हृदय से संसार सागर में बढता रहता है। अथाह से बचने के लिये। किनारा पा जाने के लिये।

"परिश्रम में सफलता मिलती है" किन्तु उसका तो परिश्रम भी लुण्ठित सा हो गया। वह अथक परिश्रम करता है। सफलता पीछे रह जाती है। क्षुधा अतृप्त। वह विकल हुआ तड़पता है। सान्त्वना शून्य में खो जाती है। यह है उसकी भाग्य लिपि। विधि की रूप रेखा।

परिश्रम से क्षत विक्षत हुआ, अतृप्त कामनाओं को विश्व में समो कर अंततः वह अनन्त की ओर बढ जाता है। उसमें मिल जाने को। समा जाने को।

चिता की लपटों में विश्व उसका दयनीय कथानक लिखा देखता है।

जीवन के चढ़ते पहर में, यौवन के उषाकाल में, मदढले ढलकते हृदय को सभाले हुए नव योवना पातुर ,मखमली मसनद के सहारे विचार मग्न बैठी चिन्तातुर हो विचारने लगी—मेरा जीवन, रुपहरी मुद्रा पर नाचने वाला मेरा जीवन ??

सतीत्व को, नारीत्व को, खोकर यह नारकीय जीवन, मुझे क्यों रुचिकर हुआ। कितनों की चाह, कितनों की प्यास, मनस्तुष्टि मुझे करनी पड़ती है। केवल धन लिप्सा के लिये। आह ‥ ‥ धन, सतीत्वधन के बदले ? उसका हृदय धक से होकर विकल हो उठा। खाली हृदय में प्रणय की प्यास जल उठी। छलकते नयन सूख गये।

अरुण कमल से नयनों पर पति परायण सलज्ज नारी का निर्मल प्रतिविम्ब नाच उठा। कुछ क्षण को वह उस मोहक दृश्य में खो गई। समा गई।

एक नि श्वास के साथ पश्चाताप मे भीगी पातुर भावी जीवन की रूप रेखा खींचने लगी। उसका हृदय हलका हुआ वह गर्वा कर मुस्कराई, और पास रखी मद भरी सुराही और प्याली को टूक टूक कर फेंक दिया।

जीवन की हाट को समेट कर यौवन को लज्जावगु ठन से ढक लिया सहस्त्र दृष्टि की उपेक्षा कर एक दृष्टि में खुब जाने की लालसा लिये हुए नारीत्व मे प्रवेश करने लगी।

नारी साधना सफल हुई। उसके निखरे जीवन से विश्व गर्वाया।

उत्ताप की ज्वाला से जलता हुआ, क्षुधा से विकल प्राणों को लेकर अपने सम्मान को धनिकों के चरणों पर चढ़ा कर जर जर तन से, मृत्यु शैया पर पड़े विकल शिशु को छोड़ कर हृदय पर पत्थर रख कर दीन श्रमिक पत्थर ढोने को चला। क्षुधा मिटाने को। शिशु बचाने को।

शून्य हुए खाली तन से दीन दिन भर पत्थर ढोता रहा। किन्तु उसका एक एक क्षण एक एक उपल से भी भारी हो रहा था। प्राण रोगी बालक में लगे थे। नयन दिनकर की ओर।

दिन ढलते ढलते, दुविधा मे मन को समोये हुए मुर्झाये तन से, लटके मुख से अतीव दीन वाणी से मालिक से परिश्रम के पैसे मागे।

सम्पत्ति के गर्व मे भूले धनिक ने सरोष दृष्टि से उसे देखा। सतेज वाणी से कहा—पैसे आज नहीं मिलेंगे।

दीन के नयन छलक पडे। गला अवरुद्ध होगया। पृथ्वी खिसकने लगी। बच्चे का अवसान सामने दीखने लगा। कठिनता से औषधि को पुन पैसे मागे।

धनिक की उपेक्षा और झु झलाहट मे उसकी विनय समा गई। साथी ने दयार्द्र होकर एक मुद्रा उसे दी।

वह आशा भरे मुख से लपक कर शिशु के निकट पहुँचा, किन्तु शिशु ने अन्तिम श्वास ले जनक को अपनी चिन्ता से मुक्त कर दिया। हलका कर दिया।

विश्व ने जलते अवसान में श्रमिक का कारुणिक कथानक लिखा देखा।

/

अभिमान में डूबा हुआ मानी धनिक, स्वार्थ मे रम कर, अत्याचार में विश्व डुबाने लगा। अपनी क्रूर लिप्सा में लगी भावनाओं से दीनों को कुचल कर, पीस कर तृष्णा का साकार रूप विश्व पर उतारने लगा। गौरव शाली, सत्ताधारी बनने को।

लाभ की चिन्ता में लगे धनिक ने नि द्रा की उपेक्षा की। धर्म को तिलाञ्जली दी। दया को दुर्बल कर हिंसक भावनाओं मे मन लगाया। मन पाप से रग गया। वह असरय मुद्राओं से खेलने लगा। साध चमकने लगी। हृदय खिल उठा। वह फूल कर विश्व से ऊ चा उठ गया।

अत्याचार की आग भडकी, फैली। दीन की आह ने उसे जलाया। उसके शाप ने उसे फू का। धनिक तिलमिलाया, विकल हुआ तड़प उठा। उसकी प्रति लपट में अत्याचार प्रतिबिम्बित था। धूम्र राशि मे उष्ण श्वास समाविष्ट थी।

धनिक गगन से उतर कर धरा तल पर आया। स्वार्थ का आवरण फट गया। पश्चाताप की आग में जल कर निखर कर धनिक दीन बना। दीनबन्धु बना।

सम्पदा के आवरण मे मानव का अनिवार्य पतन विश्व ने देखा।

विश्व पूरित गगन भेदी, गर्जना पूर्ण रण भेरी के बजते ही वरव्त सज्जित वीर युवक के बलशाली भुजदण्ड फड़क उठे। नासा पुट विस्फारित होकर, युगल नयन अरुण हो उठे। मोह विगत प्राणों में विमल कामनाओं को सुला कर, शून्य हुए कठोर हृदय से असि को चूम कर प्राणों से लगाया। प्यास बुझाने को! विजय पाने को!

यौवन भार से लचकती कोमलाङ्गी, शुभ भावना पूरित मगल मयी नारी ने चाह और साध को छिपा कर लास भरे हृदय से प्रियतम के विजय तिलक किया। जलते दीप से आरती उतारी। शुभ भावना मार्ग मे बिछाई।

मगलमयी की मगल भावना और छलकता प्रेम लेकर हृदय में आग फूक कर, नयनों में ज्वाला जला कर, श्वास प्रशास से धूम्र छोडता हुआ वीर युवक रण की ओर बढ़ा।

चपला सी चमकती असि के सहयोग से युवक ने प्रलयकाल उपस्थित किया। तृपित असि ने अपनी प्यास बुझा कर वीर की साध पूरी की। उसने मुलक कर उसे शीश चढ़ाया। चूमा।

भावना में डूबा युवक असि में नारी का प्रतिबिम्ब देख कर सहम गया। भूल गया विभेद में।

मानव की शक्ति नारी में निहित है। अथवा नारी मानव की शक्ति है।

सिकता से उज्ज्वल, मुक्ता से आबदार, अरुण कमल से अरुण विशाल नयन मानस के मनोभावों को व्यक्त करने वाला चलित यन्त्र है। निज के प्रतिबिम्ब का दर्पण है।

प्रेम विह्वल मानव के नयन छलक कर, लजाकर, मुलक कर उसका प्रेम प्रदर्शित कर देते हैं। प्रेमासव से अरुण हुए नयन प्रेमाधिक्य को सूचित कर झुक जाते हैं।

विरह ताप से तपित हुए, नि श्वासों से झकझोरे हुए मुर्झाये नयन छलक कर, ढुलक कर, प्राण की व्यथा को बता कर मुकुलित से हो जाते हैं। भारी से हो जाते हैं।

मिलन के आवेश मे लास से फूले नयन खिलकर, हँसकर चाव से इठला कर मानव के मोद को झलका कर अनियारे से होकर उसकी अमित प्रसन्नता को बता देते हैं।

दारुण दुख से जले मानव के नयन श्याम पड कर मलिन होकर विकल हुए व्यथा को बता देते है। राग विराग से शून्य हुए सूखे नयन खाली से हुए अनिमिष होकर रह जाते हैं।

पल पल के भावों को नयन बताते रहते है। मानव उन्हें मल मल कर धोता रहता है। इस निखरे दर्पण में मानव का प्रतिबिम्ब झलकता रहता है।

नयन मानव मे मानव नयन में समाया हुआ है।
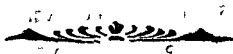
जीवन के खिलते प्रभात में, मधुरे पहर में, जाग्रति के स्वप्न में, उसने प्राणों में चाह, मन में मोद भर कर जीवन को सुधारस में समो दिया था। डुबो सा दिया था।

भव से ऊपर २ मन घूमता था। भूला सा चाव भरा मन विमल भावना में लगा 'उसी' में रमा रहता था। उसकी साधना, उसकी निष्ठा, उसका ध्येय एक 'वही' था।

दो मन एक थे, भावना एकाकार थी। दोनों की सत्ता सर्वोपरी थी। वह थे मधुर स्वप्न के भावुक रसिक। उसके अनभिज्ञ बटोही।

विमल चाह की मधुर छाप के आदान प्रदान ने प्राणों को सिजो दिया था। भिगो डाला था। नयन बतियाते थे। धड़कन सदेश वाहक थी। मुख का भाव बदरंग बना देता था नचा देता था। कपा देता था यह था उन मतवालों का प्रभाव।

निशिभर मीठे सपनों में खेलते थे। रमते थे। नव प्रभात में उनमें भूल, उन्हें प्राण मे भर कर, सजाकर उनके साकार की प्रतिक्षा में पहर बिताते थे। यह था उनके जीवन का ध्येय। उनका मधुर जीवन। विमल जीवन।

स्वार्थी विश्व को, असह्य हुआ। उसने उनकी स्नेह शृंखला को तोड देना चाहा उसके प्यार को मिटा देना चाहा, किन्तु अमर प्रेम धागे की रज्जु नहीं काफ़ूरी रग नहीं।

एकत्व में ढला प्रेम अजर और अमर होता है।

प्रभात की मधुर लहर ने, ऊषा ने अरुणिमा बिखरा कर कवि हृदय में मदिरा सी ढुलका दी । उसे लहरा दिया। मुकुलित कुसुमों ने नयन खोल कर, हँस कर उसे गुदगुदा दिया। हुलस कर उसकी भाव लहरी थिरक उठी। मचल उठी।

कवि लहराते इठलाते भावों को कलाबद्ध करने लगा। भाव भाव में प्राण निचोड़ उन्हें सजीव बनाने लगा। उठते हुए भावों के साथ कवि विश्व से उठ चला। वह चला।

अपनी कलापूर्ण रचना मे मधुर प्यास को छलका कर सिहर उठा। प्रणय की लजीली चाह से पुलक उठा। खिल उठा। प्रणय साकार होकर सामने आया। वह उसकी मूर्ति उतारने लगा।

अश्रुमुक्त से जडे उसके मर्म को खोल कर तारक से छाये छालों पर दो आसू ढुलका कर मरहम सा लगाने लगा। उसका हृदय हिला, पिघला। विह्वल होकर थर्रा उठी। काप उठी।

मधुर बेला मे दिनकर सा ताप उसे खलने लगा। उसने अनमने मन से लेखनी घुमाई। दूसरे प्लाट पर रसीली रचना में मन लगाया।

रसिक कवि प्रतिभाव को जीवन रस में डुबो डुबो कर सजाने लगा। अलकार से सज्जित भाव पाठक से बतियाने लगे। उसमे नवजीवन का सचार करने लगे।

अपने अथक परिश्रम को सफल होता देख कवि पुलक उठा। खिल उठा ऊषा के साथ साथ ही।

कलाकर कवि विश्व का अग्रदूत, मार्ग प्रदर्शक है। उसकी रचना अजर अमर है।

मध्याह्न के अन्त मे अशुमाली के शीतल पडते ढलते पहर में मजुल भावनाओं को हृदय में समेटे हुए, मधुर अतीत की स्मृति में डूबा हुआ, कुछ खोया हुआ सा, अपने मुकुलित कज्जल मज्जित दीर्घ नयनों को उसके मृदुल चरणों में गड़ा कर सुकोमल करों से चरण स्पर्श कर उसने सपुट करों से मस्तक को झुकाया, और धड़कते हृदय से, छलकते नयनों से वाणी द्वारा विदा मागी।

विमल वसना के निर्मल स्नेह से प्लावित उर मे शत २ आशीर्वाद प्रस्फुटित होने लगे। दुलार से भीगा मधुर कर उसके झुके शीश पर फिरने लगा। वह कुछ स्तब्ध हुई। प्यार से रंगे मदियारे नयनों में स्नेह बि दु मलक आये, कि तु मागलिक भावना ने उन्हें वहीं पोंछ दिया।

उसकी भावना विक्षिप्त सी हो गई। हृदय बैठने लगा। वह कुछ खोने और खाली होने सी लगी। उसने एक उष्ण श्वास ली।

सचुप हिलते अधरों में विदा के शब्द समा गये। नयनों ने अपलक होकर विदा देखी, और वाणी ने मौन होकर।

स्निग्ध स्नेही, किन्तु निष्ठुर दीप। उर में स्नेह भर कर भी क्या तूने कभी किसी को प्यार किया है ? तेरे प्यार की प्यास लेकर युग २ से परवाने जलते हैं। भोले चंचल शलभ प्यास की तृष्णा बुझाने के लिए, तेरे से लिपट जाने के लिये दौड़ कर तेरे निकट आते हैं, किन्तु तृप्ति तो दूर वह अपने जीवन से भी हाथ धो बैठते हैं। कितना महान उनका उत्सर्ग है, और तेरा कितना हीन व्यवहार।

वह स्नेही तेरे रूप के दीवाने तुझे स्नेहासिक्त देख कर ही तो तेरे पास आते हैं, किन्तु तुझे उनकी किंचित भी परवाह नहीं। वह तेरी आखों के सामने छटपटा कर प्राण विसर्जन कर देते हैं, परन्तु तू यों ही लापरवाही से मुह उठाये अपने गर्व में झूमता रहता है। उपेक्षा से मुस्करा कर हँस उठता है।

ओ निर्मोही क्या यह व्यवहार तेरे योग्य है। तू सुन्दर और भोला है। स्नेह से हृदय भर कर भी इतना जघन्य कर्म क्यों ? स्वय जलता है क्या इसी लिए दूसरों को जलाता है ?

, इधर इठलाती हुई सध्या तुझसे मिलने की लालसा लिये हुए आती है। तुझमे खो जाना चाहती है। रम जाना चाहती है। सारी शक्ति से तेरे चरणों में लोट कर तुझमे अभिन्न होना चाहती है। प्यास की चाव में तुझे देखते ही घू घट उठा कर तेरे प्रकाश पु ज से चमक उठती है, खिल उठती है। किन्तु क्या कभी तेरा हृदय प्यार से गुदगुदाया ? उसकी सिहरन का क्या कभी तैने अनुभव किया ? तू कभी सिर उठाकर भी अपनी

प्रियतमा की ओर नहीं देखता, अपने प्रकाश और तेज के घमंड में अपने में आप ही समाया रहता है। सुनहला रूप लेकर भी तेरा हृदय इतना काला, इतना शुष्क क्यों ?

देख मतवाले वह समय आयगा जो तुझे भी कोई आव चढ़ाकर न देखेगा। तू ठुकराया जायगा। तेरा सारा स्नेह जल जायगा, और बाकी रहेगी तेरी चुटकी भर राख।

सध्या की आगमन जान कर रोष से रक्तिम नेत्र करता हुआ दिनकर धीरे धीरे अस्ताचल की ओर जाने लगा। संध्या खिलती इठलाती मचलती हुई सी अपना प्रभाव चारों ओर जमाने लगी। प्रिय का आगमन देख उसके स्नेहासिक्त चाव भरे मन मे मधुर मधुर भावों ने एक सिहरन सी भरदी। वह पुलक उठी। उसके हृदय में लालसा का दीप जग उठा। उसके प्रकाश में, अपने प्रियतम की छवि देख, उसने अपना घूघट उलट दिया, और निशानाथ मे मिलकर उसका काला कलूटा रूप चमक उठा। वह मचल उठी। उसकी हँसी की फुलझडिया निशानाथ के चारो ओर बिखर पडी।

निशानाथ फुल झडियों का पाट बिछा हुआ देख कर सध्या पर मुग्ध हो गये, और उन्हें पैरों से कुचलते हुए संध्या को प्रेमालिंगन में आबद्ध कर लिया। संध्या निशानाथ मे अभेद हो गई।

संध्यारानी रजनी भर निशानाथ से अठखेलिया करती रही। दुनिया समझ न सकी कि निशानाथ और सध्या एक है या दो।

ब्राह्म मुहूर्त में उषा उठी, और क्षितिज मे झांक कर विश्व को देखने लगी। विश्व को प्रमाद और आलस्य में पड़ा देख उसके नेत्र क्रोध से रक्तवर्ण हो गये। मुख तमतमा उठा। वह तमक कर क्षितिज की और ऊपर आई, और आप ही आप बुदबुदाने लगी कि सुन्दर प्राण प्रदत्त त्रिविध वायु वह रही है, और मूढ़ प्राणी अभी तक सोया हुआ है। उसे मेरे आने का भी ध्यान नहीं ? उसने पत्र फलों सी अगुली ऊपर उठा कर इंगित किया, और द्रुतगामी पवन चला।

उसने वृक्ष को हिलाया। उस पर बैठे परिन्दों को जगाया। परिन्दों के गान को मनुष्यों के कान में पहुचाया। मनुष्य ने धीरे से अलसाये नेत्र खोल (मुह उठा कर क्षितिज की ओर देखा, और नारी की उपेक्षा कर उसने फिर आखें बन्द कर ली।

क्षितिज में उषा का खून और भी खौल उठा। उसके रश्मि नेत्रों की ज्योति से सारा क्षितिज लाल होगया।

धीरे से भास्कर ने आकर जब मनुष्य द्वारा उषा की इस प्रकार अवहेलना देखी, तो वह उषा से बोले–उषा शांत हो। मैं देखता हू मनुष्य को। इतना कहते कहते उषा को पीछे कर आप सामने आ विश्व की ओर बढने लगे। धीरे से उषा भास्कर में लीन हो गई।

भास्कर की स्वर्ण रश्मि ने प्राणी मात्र को जगा दिया। विश्व में कोलाहल हो उठा। भास्कर तेजी से बढने लगे।

मनोहारणी प्रभात वेला में दिनकर ने अगडाई लेकर विश्व की ओर देखा। विश्व को निष्प्रभ कोलाहल शून्य देख, घोड़ों की रास हाथ मे थाम रथ पर सवार हो विश्व की ओर चले। उन्हें आता देख मुर्झाया कुछ अलसाया सा अन्धकार भागा। रजनी तारे भय से निष्प्रभ से हो गए, और रजनी की चूनर के सुनहरी फूल मुर्झा कर गिरने लगे। वह भी विलपती सी एक ओर को खिसकने लगी, किन्तु हटीली उषा उनके स्वागतार्थ और भी आगे खिसक आई। दिनकर ने मुस्करा कर प्यार भरी दृष्टि से उसे निहारा। उषा उनमे विलीन हो गई। दिनकर की सुनहरी आभा और भी द्विगुण हो गई। वह सगर्व रथ को क्षितिज मे बढ़ा कर अपनी स्वर्णिम रश्मि से विश्व को गुदगुदाने लगा, और अपनी सुनहरी किरणों से ससार को स्वर्ण मय बना दिया। प्राणी मात्र म स्फुर्ति भर दी।

प्रिय कमलिनी सुनहरी रश्मि का स्पर्श पा कर किलक उठी, और विश्व? वह तो थिरक उठा। कुजों मे कलियों ने घूघट उलट दिये, और चक्रवाक मिलन वेला मे सिहर उठे।

विश्व की शान्ति भग हुई देख दिनकर भी खिल उठा। मुग्ध होकर घोड़ा की रास धीमी कर दी, और धीरे २ आगे बढ़ने लगा।

विश्व चमक उठा, खिल उठा, और चहक उठा। उसने पुष्प और जल से अञ्जली भर आतप की पूजा की। मनस तुष्टी से उन्नति की ओर चला।

सोलह कलाओं से शृङ्गार किये हुए शशि रजनी से मिलने के लिए आतुर हुए सोच रहे थे कि रजनी का प्रेमालिंगन कितना मधुर और सुखकर है। उसकी श्यामवर्ण मोहनी मूर्ति मन को बरबस मुग्ध किये लेती है, और उस पर सुनहरी फूलों के आभूषण सोने में सुहागा, जैसा काम करते हैं। श्यामवर्ण में सुनहले रंग की आभा, क्या अजीब सुन्दरता ला देती है। उसकी मीठी मुस्कान, खिलती हुई हँसी का स्मरण कर शशि का मुख रक्तवर्ण सा हो आया। उर मे एक सिहरन सी हुई। उसका हृदय गुदगुदाने लगा। पाव तेजी से बढ़ने लगे।

सामने से सजी धजी श्यामा रजनी को आता देख, उसका हृदय खिल उठा, और श्यामा तो उसके चरणों पर लोट पोट होगई,।

शशि ने रजनी को उठा कर अंक पाश में भर लिया, और बोले—रजनी तुम कितनी सुखकर हो। मुझे ही नहीं प्राणी मात्र को तुम्हारा आगमन कितना श्रमहारी सुखकारी और शान्तिदाई है। सब तुम्हारे आश्रय मे आकर कितने आनन्द परमानन्द मे विभोर हो जाते हैं। वास्तव मे तुम न होती तो मेरा अस्तित्व तो कुछ मायने ही नहीं रखता। फिर तो मैं चम्पे का फूल ही होता। ससार उपेक्षा से मुह फेर कर चलता। रजनी! आज तुम्हारे कारण मेरा ससार मे कितना मान हो रहा है। मैं भी कोई उपयोगी वस्तु बना हुआ हू तो केवल तुम्हारे कारण।

रजनी ने मुह उठा कर शशि को निहारा । उसके नयन, प्राण, सर्वांग चमक उठा। हँसते हुए नेत्रों मे नेत्र गडा कर बोली—प्रिय इतना मान। कहा उठा कर रखूगी। मेरी शोभा के आधार भी तो तुम्ही हो। यदि तुम न होते तो मैं ससार में जीती ही क्यों ?

संसार ने अर्ध निमिप नेत्रों से देखा, रजनी शशि के कारण बनी और शशि रजनी के कारण ॥

विस्तृत नीलाम्बर में थिरकते, इठलाते, खिलते से सुधांशु के निर्मल सुकोमल हृदय मे गर्व का सचार हुआ। वह सोचने लगा कि मेरा सा रूप, मेरी सी चमक ज्योत्सना ससार के किसी पदार्थ में नहीं। नन्हें से यह टिमटिमाते तारे जुगनु सदृश्य व्यर्थ का प्रकाश फैलाने का प्रयत्न करते है। भला कहीं जुगनु रजनी का अन्धकार मिटा सकता है ? इसी तरह दीपक, घोर अन्धकार मे डूबे प्राणी को तिनके क सहारे के समान प्रतीत होता है। घोर अन्धकार मे डूबा प्राणी दीपक जलाकर अपनी आवश्यकतायें पूरी कर लेता है, किन्तु क्या असख्य दीपक जलाने पर भी मुझ सा प्रकाश पा सकता है। और मैं, मैं केवल अकेला ही सारे ससार को जगमगा देता हू। अन्धकार भी मानो सफेद प्रकाशमान सा हो जाता है। मेरी ज्योत्सना की शरण मे आते ही अपना अस्तित्व मिटा देता है — अह ह ह करके सुधांशु हँस पडा। कुछ क्षण बाद फिर विचारने लगा। धीरे २ उसका मस्तिष्क भ्रमने सा लगा। मानों किसी गभीर विचार मे लीन हो। उसकी विचार धारा दिनकर की ओर मुड़ी। वह सोचने लगा, हा दिनकर मुझसे कहीं अधिक प्रकाश रखता है, और रूप, रूप तो उसका जलता अगारा सा कुछ अच्छा नहीं लगता।

ऊह प्रकाश भी मुझसे अधिक है तो क्या, किन्तु जलते से प्रकाश में प्राणी झुलस सा जाता है। घोर निदाघ मे तो प्राणी ही व्याकुल नहीं हो जाते, स्थावर वृक्षादि तो झुलस कर ठूठ रह जाते हैं। मानों आग मे डालकर निकाले हों। लहलहाते ताल तलैयों का तो जल ही सूख जाता है। बिचारे निष्प्राण से

हो जाते हैं। पृथ्वी मे हाहाकार सा मच जाता है। आकुल प्राणी इधर उधर इस तरह से लुके छिपे पडे रहते हैं। मानों महामारी का प्रकोप फैला हो। विश्व में सन्नाटा सा छाया रहता है। इतना सोचते २ उसे सुख की श्वास आई। फिर अपने उपकार की सोचने लगा। उसके हृदय मे फिर जोर से अहकार जागा। वह मदमस्त हुआ झूमने लगा। मुलक कर फिर सोचने लगा कि मेरा प्रकाश विश्व को कितना सुखकारी, लुभावना है। दिन भर के परिश्रम से थका मादा प्राणी मेरी शीतल ज्योत्स्ना में विश्राम पाकर समस्त दुख को भूल जाता है। मेरी रजत रश्मियें उसे थपकी सी देने लगती है। वह आनन्द मे विभोर हो धीरे २ मीठी नींद मे सो जाता है। मानों मा की गोद का आश्रय मिला हो।

अनेक का मन तो मेरी ठडी चादनी को देखकर इतना थिरक उठता है कि वह रात रात भर किलौले करता रहता है। रात में ही दिन का समा बन्ध जाता है। आहा मुझ पर प्राणी मात्र मुग्ध है। वास्तव मे मैं श्रमहारी, आनन्द और शान्तिदाई हू। इतना सोचते ही उसका मस्तिष्क गर्व से और भी ऊचा हो गया, कि‍तु उसके निर्मल उर मे गर्व का काला दाग विश्व को स्पष्ट दिखाई देने लगा।

अपनी प्रणयिनी उषा के क्षणिक सहवास का स्मरण कर मथर गति ले चलते हुए दिनमणि का मुख किंशुक कुसुम सदृश रक्तवर्ण हो उठा। उसने घोड़ों की लगाम खींची। रथ तेजी से चल पडा।

अनुरक्त नेत्रों से दिनमणि ने उषा को ओर निहारा। उसकी दृष्टि स्थिर भी न हो पाई थी कि उषा विलुप्त हो गई। उसके हृदय मे एक ठडी आह उठी। उसका मुख सफेद होगया। उसके हृदय मे अपने दुर्भाग्य के प्रति विप्लव सा उठा। उसे अपना प्रखर तेज खलने लगा। वह उसे ही जलाने लगा। वह कह उठा "रजनीकात तू कितना भाग्यवान है। रात भर अपनी प्रिया के प्रेमालिंगन मे मग्न रहता है। तू कितना उदार है स्वय ही इस सुख का लाभ नहीं उठाता, प्रत्युत ससार भर को भी वही सुख प्रदान करता है। तेरा प्रकाश कितना शीतल, कितना आनन्ददाई है। तू धन्य है।"

एक मैं अभागा हू कि इतना तेज, इतना रूप, शौर्य रखता हुआ भी प्रियाहीन हू। आयु भर प्रणय सुख से वचित रहा। इतना सोचते ही उसका हृदय और भी जल उठा। क्रोधावेश मे ससार की ओर बढने लगा। अपनी कमी, अपनी व्याकुलता भुलाने के लिये अपने शौर्य की ओर दृष्टिपात किया।

सुख नींद सोया हुआ प्राणी मेरी गरम गरम स्वर्ण रश्मियों के स्पर्श मात्र से ही चौक कर परिश्रम मे जुट जाता है। हाथ बाध कर घन्टों मेरे सन्मुख खडा रहता है। मुझ से डरने वाले तो अनेक हैं परन्तु मुझ पर मरने वाला तो एक भी नहीं।

उसका हृदय फिर कसक उठा । एक कचोटनो सी लग गई। यह चुद्रतम प्रकाश वाले दीपक को भी अपने से अच्छा समझने लगा, क्योंकि उस पर अनेक मुग्ध शलभ मरते हैं। फिर भोले कुसुम की ओर उसका सूखा रिक्त हृदय झुका । भ्रमर और कुसुम के स्नेह विनिमय की सोच कर उसके उर मे प्रेम साकार सा हो उठा। दोनों हाथों से हृदय थाम कर ठिठक गया। चारों ओर उसे अनाथ सी शून्यता और अपनी हीनता सी छाई हुई प्रतीत हुई।

उसने फिर विश्व में नर नारी के जोडे को देखा । पशु पत्ती के प्रेम को देखा, और देखा समस्त प्रकृति को स्नेह पाश मे आबद्ध। विश्व और गगन मे केवल अपने को अकेला पाया। उसके हृदय मे प्रचण्ड ज्वाला जलने लगी । वह उस में जलकर जलाने का काम करने लगा।

प्राणी मात्र ने देखा ईर्षालु दिनमणि, एक जलता हुआ कोयला है।

अरुणी सध्या के झुटपुटे मे रजनी ने अपना प्रभाव जमाना आरम्भ किया। जलधर के आवरण मे छिपे नन्हे नन्हे तारे मचल उठे। एक दूसरे को ठेलते हुए सभी विश्व में पहले झाकना चाहते हैं। अपनी बाल सुलभ चचलता वश कोहनी का टोहका देते हुए क्रोध से एक तारे का मुख किंशुक फूल समान लाल हो उठा। कहने लगा सब से पहले मैं गगनागन में विचरण करूँगा। मेरे दर्शनाभिलाषी अनेक प्राणी उत्सुक होंगे। ज्योतिष गणना अधूरी पड़ी होगी। बीच मे ही एक नन्हा तारा तुतला उठा कि नहीं पहले मैं जा रहा हूँ। न जाने कितनी नारी दर्शनो को खड़ी होंगी। कहती होंगी एक छोटा सा तारा दीख जाय तो भोजन करलें चलो हटो मुझे जाने दो।

उस छोटे नन्हे सुकुमार का विफल प्रयास देख कर सब खिल खिला उठे। कहने लगे चलो भाई सब साथ ही चलें, किन्तु इतने मे ही खिडकी खोल कर ध्रुव ने सब को ललकारा कि सावधान एक न जाने पाये, सब ने मुह बना कर एक दूसरे को सकेत किया, और टोली की टोली मिलकर जलधर के परदे को उठाती हुई गगनागन मे खिल उठी। फिर क्या था मगल, बुध, शुक्र सब क्रोध से तलमला उठे, और रक्त भरे नेत्रों से आकर उन्हें घूरने लगे। धीरे धीरे सप्त ऋषियों की टोली भी आई, और शात भाव से विश्व मे अनहोने दृश्य देखने लगी, तथा पास ईर्षालु तारों को शात करने लगी। उनके प्रभाव से सब तारे स्थिर हो चले, किन्तु मन मुटाव का मैल हृदय से नहीं गया। एक दूसरे को गिरता देख कर कोई हसता है, कोई खिलता है,

मुस्कता है। इतने में अपने स्वामी कलाकार को आता देख नन्हे नन्हे तारों के तो प्राण सूख गये। मुख सफेद पड़ गया। वे दुम दबा कर इस तरह भागने लगे, गिरने लगे, झड़ने लगे कि जैसे दीपक का फूल झड़ जाय, पका हुआ आम गिर पड़े, और उषा के आते ही रजनी भाग उठे।

कौन जाने उन नन्हे तारों ने आना और जाना, जाना भी।

निबिड अन्धकार को चीरता हुआ स्वर्ण शिखा सा दीप जल उठा। अपनी विजय से प्रफुल्लित हुआ उसका हृदय खिल उठा। उसकी गर्वित भावना अन्धकार को भागता देख अट्टहास कर उठी। वह सोचने लगा मेरा नन्हा सा शरीर संसार के लिए कितना उपयोगी, कितना प्रिय और कितना आवश्यकीय है, किन्तु इतने पर भी मैं उनके हाथ का खिलौना हूं। मेरा जीवन कितना क्षुद्र, क्षणिक और पराङमुखी है। हवा का एक झोंका, मनुष्य की एक फूंक। जीवन समाप्त।

उसका मुख पीला पड गया। हृदय की ज्वाला से लौ ऊंची उठने लगी। इतने मे ही अनेक उन्मत्त भुनगे आ आ कर गिरने, जलने और मरने लगे। दीपक का स्वांग कापने लगा। इस हत्याकाड से वह दहल उठा। सोचने लगा इस छोटे नन्हे शरीर से इस नाड को कैसे रोकू। यह क्यों व्यर्थ में जीवन देकर हत्या मेरे मत्थे मढते हैं। अपनी प्यास के आगे क्या अपने जीवन का मूल्य भी नहीं समझते। क्या प्यास जीवन से भी अधिक मूल्यवान है? ऐसी प्यास कैसी होती है। भगवान ने भला किया जो ऐसी प्यास मुझे न लगाई। नहीं तो व्यर्थ में जीवन खोना पडता। तडपना और मरना पडता, किन्तु मुझे आश्चर्य है कि मैं स्नेहासिक्त होकर भी नीरस कैसे हू। मुझे किसी का प्यार छू नहीं जाता। किसी के मोह की सिहरन मुझे नहीं हिलाती। भोले शलभ मुझे छू नहीं सकते। पल को भी मेरा प्रेमालिंगन नहीं कर सकते। फिर, फिर क्यों मूढवत मरे

जा रहे हैं। केवल मुझ पर मुग्ध हुए। हाय रे मोहकता। मुझे इतना रूप दिया ही क्यों प्रभो ? जो व्यर्थ मे कितनों की जान का ग्राहक हुआ।

अरे शलभ मेरे हृदय में तो ज्वाला है। जलता ही रहूगा। जलने को ही बना हू। जलना ही मेरा काम है। आओ जलो, तुम भी जलो। जब मैं जलता हू तो जलते रहो ? जलने पर ही मूल्य बढ़ता है।

अनन्त काल से दीप शिखा पर शलभ अपनी अमर गाथा लिखते जाते हैं।

दुग्ध फेन से सुकोमल जलधर इतनो द्रुत गति से क्या प्रशात गम्भीर रत्नाकर की लोल लहरों की छिटकत हुई बून्दों का सन्देश अपनी प्रिय अभिसारिका चपल चचला के पास पहुचने जा रहे हो, किन्तु वह तो तुम्हारे हृदय प्रदेश मे ही विद्यमान है फिर —??

चपल घन जब तू अपनी प्रिया से असन्तुष्ट होता है तो क्रोध से इस तरह बड़बड़ाने लगता है मानो जर्मन की लड़ाई में लगातार बम विस्फोट होता हो। संसार के कानों के परदे फटने लगते हैं। प्राणी आख और कान मूद लेता है। भय स काप उठता है। वह सोचने लगता है कि कहीं प्रलय न हो जाये। तेरी प्रिय चचला को सहन नहीं होता तो वह भी बल खाती हुई आखें ततेरने लगती है, तब मेरी सिट्टी गुम हो जाती है। उससे कुछ न कह कर चुप चाप अविरल रूप से अश्रुधारा बहाने लगता है। तेरा हृदय हलका हो जाता है। साथ ही साथ विश्व का हृदय भी हलका हो जाता है। उसकी आशाओं का बाजार खुल जाता है। कामनायें रगीन होकर तेरे अश्रु विन्दु के साथ ही नाच उठती हैं। कृषिजन तो तेरे अश्रु विन्दु को सहर्ष अचल पसार पसार कर मागने लगते हैं। तेरे विन्दु तो उन्हें स्वर्ण विन्दु हैं। मत्त मयूर भी उनका स्वागत करता है।

जब कभी तेरे हृदय में शोक का अधिक बवण्डर उमड़ता है तो तू अजस जलधारा बहाने लगता है। ससार निहाल हो जाता है।

प्रकृति की चाल, विश्व का नियम देखो, एक रोता है तो एक हँसता है। परोपकारी घन तेरा जीवन विश्व व्यापी विश्व पोषक, विश्व प्रिय और महान है।

चचला जब यह देखती है तो उसका क्रोध तुझ पर से हट कर विश्व पर छा जाता है। वह दाँत किट किटा कर आँखें दिखाने लगती है और खूब जोर से कडक कर विश्व को फूक देने की धमकी देने लगती है। इतने से ही इसका हृदय शात नहीं होता। वह अनेक बार ससार को फूक देने का, उसे नष्ट भृष्ट कर देने का प्रयत्न करती है। जब अधिक क्रोधित होती है तो विश्व मे ही आ पडती है। कितने ही जीव उसकी क्रोधाग्नि में भस्म हो जाते हैं। जिसका भी पल्ला छू जाता है वही जल कर राख हो जाता है। शरीर धारी जीव ही नहीं, प्रत्युत स्थावर, जगम चीजें भी स्याह पड जाती हैं।

मतवाले घन!, महान शकर की जटा में जैसे गङ्गा समाई हुई है, उसी प्रकार यह तेरे हृदय में समाई रहे, तभी विश्व का कल्याण है।

जल और अग्नि के समिश्रण को विश्व ने आख फाड कर देखा।

वीणा पाणि के कज्जल से काले सुकोमल केश कलाप सा काला भ्रमर अपने हृदय में प्यार को प्यास, मोह की लालसा और आशाओं की इच्छा लिये अनन्त काल से भोली मुग्धकारी कलिकाओं के चारों ओर गुंजारता रहता है। जीर्णावस्था से रहित उन्मत्त भ्रमर की न बुझने वाली प्यास प्रतिक्षण यौवनावस्था के उभार मे ही डुबाये रखती है।

भ्रमर मतवाला हुआ अपनी प्रिया के अतिरिक्त कुछ देखता ही नहीं। मार्ग में कितने कॉंटे बिछे हैं इसकी उसे परवाह ही नहीं, पल्लवदल कितना अपमान करते हैं। उसकी प्रिया सिर उठाकर भी नहीं देखती, इन सबकी उसे कुछ चिंता नहीं। मानों प्रेम करना ही उसका ध्येय, और प्रेमगान मे ही मस्त रहना उसका लक्ष्य हो।

बुद् बुद् सी कोमल कलिका उसे देखकर इठलाती, झूमती और पनपती रहती है, और प्यार की प्याली पी पी कर खिल उठती है। तब भ्रमर का परिश्रम सफल होता है। जितना रस पीता है उतना ही अधिक अतृप्त हो उठता है। वह भूल जाता है कि एक क्षण आयेगा प्यार की प्याली छलक जायगी। कलिका एक झोंके मे धूल धूसरित हो जायगी।

मद होश भ्रमर गुंजार, खूब गुंजार और इतना गुंजार कि संसार की समस्त लय तेरे गुंजार में डूब जाय। प्राणी झंकार उठे। तेरी गुंजार के अतिरिक्त उसे कुछ सुनाई न दे। वह भी तेरी ही गूंज में बेहोश सा हो जाय। भूल जाय विश्व के

विभेद को। एक गूज मे सभी गूज उठेंगे तो ससार मे समता का साम्राज्य छा जायगा, और रह जायगी केवल प्रेम की प्यास।

भ्रमर का गुजार कलिका अधिक न सह सकी। उसने धीरे से कपाट खोल दिये, और घूघट उलट कर गुलाबी नेत्रों से मद उडेलने लगी। कलिका के अक क्रोड मे बैठा भ्रमर चन्द्रानन में लगे काले बिन्दु सा प्रतीत होने लगा। भ्रमर के सिहरन से नयन बन्द हो गये। उसने नहीं देखा कि कलिका का रूप कितना लुभावना हो उठा है। उसने भोले भ्रमर रूप को आखों मे कैद कर लिया था न ?

क्षण भर मे एक मनचले मानव की दृष्टि खिली कलिका पर पडी। उसने लपक कर उसे तोड़ लिया, और साथ ही तोड लिया भ्रमर का हृदय, उसके खिलते हुए स्वप्न, और उसके अरमानों का ससार।

मानव ने नहीं जाना मेरा सा हृदय इस भ्रमर, फूल, पात पल्लव से लेकर सौरभ कण तक मे है। काश जानता तो कठोरता तरल उठती।

पश्चिम में दिनकर को डूबता हुआ देख कर क्रूर यामिनी का आगमन जान कर, प्रिय प्रेम में डूबे हुए, हरित डाल की शिखर पर बैठे हुए चक्रवाक का नन्हा उर श्याम वर्ण हो डूबने लगा।

उसका मुख सूख गया। प्रिय वियोग से पहले ही उसके नयन मुंद गये। मानों आते हुए वियोग को वह देखना नहीं चाहता हो। उसे विदित भी नहीं हुआ कि कब, कहाँ को उसकी प्रिया कब चली गई।

ठंडी रजनी के समीर ने उसे कंपा कर, हिला कर जगाया उसने आँखें खोलीं। विरह की भयावनी निशा का अपने उर में फैले अन्धकार से सामञ्जस्य करने लगा। निशा के यह चमकते फफोले मेरे उर जैसे ही, विरह के ही तो हैं।

निशा ? तेरे अश्रु बिन्दु फूल पात पर गिर कर मोती से प्रतीत होते हैं, किन्तु मैं तो अपने अश्रु बिन्दुओं को पी कर ही सूखे कंठ को तरल करता रहता हूं। पगली यों खो देने से तो पी जाना ही अच्छा है।

चक्रवाक ने श्वास भर कर छल छलाये नयनों के जल को अपनी ऊष्ण श्वास से वहीं सुखा डाला।

चक्रवाक की वियोगी दशा रजनी न देख सकी। वह दहल कर पिघर कर चल पड़ी।

क्षितिज में ऊषा को देख चक्रवाक के नयन खिले। अंगड़ाई लेकर, एक फुरहरी के साथ प्रिय प्रेम से नयन रंग डाले। भोले

सुकुमार मुख पर प्रतीक्षा की छाप लगा डाली, और एक टक से स्थिर हुआ प्रिया आगमन की वाट जोहने लगा।

मतवाले समीर ने उसकी प्रिया के मीठे रटन का सन्देश धीरे से आकर कहा। चक्रवाक की समाधि भंग हुई। वह चौंका। सामने प्रिया को देख, पुलक उठा, सिहर उठा। और उसका विश्व सजग हो उठा।

नयन, हृदय अभेद होकर जा मिले। विश्व में दम्पति का प्रेम अभिन्न होकर रम गया।

उत्ताल तरगों से तरगित, नीलाभ मानस की गोद में इठलाती हुई, चित्रित पात सी पतुरी, चचरीक सी मुग्धा भोली सुकुमार जलचरी ने प्रियतम को अपना जीवन अर्पण कर दिया। जीवन न्योछावर कर दिया।

जीवन मे जीवन मिला कर प्रियतम की छवि देख मतवाली हो उठी। बौरी हो उठी। उसके प्राण में थिरकन भर उठी। उसका पल पल चचल हो उठा। अपनी सगनी चचल लहर से धीरे से बोली, भोली। जीवन में रम जा। अपना अस्तित्व प्रियतम में खो दे।

दूसरे क्षण उस मृदुल लहर को जलचरी न देख सकी। वह प्रति लहर में यही सन्देश सुनाने लगी। और उनके लय हो जाने को देख सुखानुभव करती हुई इठलाती रही।

किन्तु एक समय आया किसी एक लहर ने खीज कर एक झटके मे उसे दूर फेंक दिया।

जलचरी के प्राण छटपटा कर प्रिय लोक में जा रमे। सच्चे प्रेमी का अद्भुत मिलन विश्व ने देखा।

घर घराते सघन घनों की चोट को सहते हुए मतवाली उतावली तरल स्वाति विन्दु हृदय में प्यास जगाये हुए, सजोये हुए गगन से मानस के हृदय को चीर कर, तृषित विकल सीप के मुख मे छलक पड़ा। साध, साधने को। मुक्ता बनने को।

खाली हृदय सीप ने चाव भरे मन से स्वाति नक्षत्र को हृदय से लगाया, और बड़ी साध से अपनी आभा उस पर उडेलनी लगी। जोबन भरने को। मोहक बनाने को।

जोबन के मोल, जीवन लेकर इठलाती हुई स्वाति किसी धनिक के शीश चढ़ने को गर्वा उठी। किसी के गलहार बनने को मचल उठा।

सीपी के सहयोग से रूपातरित होकर स्वाति ने मान पाया। किसी के नयनों मे खुबी। किसी के शीश, किसी के हृदय पर विहार करने लगी। धनिकों के धनाकोषों मे खुल खेली। मोती बन कर मुक्ता बन कर।

श्रेष्ठ के सहयोग का फल गौरव शालिता है। अथवा श्रेष्ठ के सहयोग मे गौरव शालिता निहित है।

सुनहरी प्रभात मे, चचल सुरभित समीरण ने पल्लव दल के अक क्रोड में सोई हुई कुसुम कलिकाओं को धीरे से जगाया। किसी को गुद गुदाया। किसी को खिलाया। कुसुम ससार खिल उठा। समीरण एक का सन्देश दूसरे को पहुँचाने लगा। कुसुम हृदय मे बन्दी भ्रमर छुटकारा पाकर उसका यशोगान गा उठा। उसने अपनी गु जार से कुसुम को मदोन्मत्त कर दिया। वह झूम झूम कर विभोर हो उठा।

कुसुम ने हुलस कर अपने हृदय में झाका। मकरन्द को सहलाया। उसकी भीनी सुगन्ध से मस्त हो उठा। अनेक रगों से चित्रित नवनीत सी सुकोमल पंखुरियों को खोल खोल कर देखने लगा। उसे आश्चर्य हुआ कि वास्तव में मेरा वैभव मन मोहक है। मैं विश्व में अद्वितीय हू। तभी मानव मेरे निकट आकर समस्त दुःख भूल प्रसन्न हो जाता है। मेरी मादक सुगध से तन्मय हो जाता है। मुझे देख कर उसकी विचार धारा भक्त हो उठती है। कोमल कोमल भावों से उसका हृदय गुद गुदा उठता है। *कविकुल की भाव लहरी का तो मैं साकार रूप* हू। वह मुझे पाकर इतना प्रसन्न होता है, मानो कुबेर का धन हाथ आगया हो। विश्व को भूल, मुग्ध नयनों से घण्टों मुझे देखता हुआ विदेह सा हो जाता है। कुसुम कुलों से बैठा बातें किया करता है। वह प्यार से मुझे चूमता है। हृदय से लगाता है। अपनी आखें ठण्डी कर अतृप्त सा बरबस मुझ से विलग होता है। कुसुम गर्वित हुआ।

ससार का उपेक्षामय तिरस्कार, तरल किन्तु कठोर काटे के हृदय में कसक उठा। उसे अपना निष्प्रयोजन जीवन भार सा प्रतीत होने लगा। उसे वह दृश्य याद आया, जब कोमल कलिका सी सुकुमार बालिका की नवनीत सी अगुलियों को अचानक बींधकर रक्त से लाल कर दिया था उसे टीस, आह, सिसकी, आसू न जान कितनों क याद आने लगे। अपने अत्याचार की क्रूर कहानियों से अब उसका हृदय भर गया था। इस पाप जीवन से किस प्रकार त्राण पाये। रात दिन सोचते २ उसके प्राण सूख चल थे। वह पल्लव दल में मुह छिपाये भीतर ही भीतर आसू पीता रहा, किन्तु उसकी प्यास शान्त न हुई।

ललचाई दृष्टि से पास खिलते हुए रगीन कुसुम की ओर देखा। पार्श्व में कोमल पल्लव दल को सहलाने लगा। कुसुम दल के प्रणयी अलिवृन्दों की गु जार ने तो उसकी नस नस में टीस भर दी। उनका प्रेमाभिनय वह न देख सका। ईर्षा से उसकी तरलता कठोर होने लगी। धड़कते हृदय से धीरे से कुसुम से कहा, दोस्त ? विश्व मे नि सार जीवन का क्या प्रयोजन ??

कुसुम ने अपनी मृदुल पखुरियों से उसके शुष्क कठोर कपलों को छूते हुए उसे सान्त्वना दी और बताया कि तृण का भी जीवन विश्व मे नि सार व्यर्थ नहीं। फिर तुम तो महान परोपकारी हो। तुम मेरी ही नहीं, न जाने कितनों की रक्षा करते हो। तुम्हारे भय से प्राणी दूर भागते हैं, और साथ ही आवश्यकता पड़ने पर तुम्हारी रक्षा मे किसी वस्तु को रख आप निश्चित हो कर घूमते, फिरते, सोते हैं। कुसुम ने फिर प्यार से थपकी दी।

स्वर्णरजित प्रभात वेला मे मत्त समीर ने प्रशांत सागर की उत्ताल तरंगों मे समाधिस्थ मुकुलित कमल को जगाने का, उसे खिलाने का, विफल प्रयास किया। ध्यान स्थित बक के समान एक चरण से खड़े कमल का ध्यान भङ्ग न हुआ। समीर के स्पर्श तक का भान उसे न हुआ। सागर की लोल लहरों ने उसे गुद गुदाया। छोटी छोटी मृदुल ललित लहरों ने, नन्हे २ छींटे उसके मुख पर उछाल, परन्तु कोई भी उसे जगा न सका। खिला न सका।

पल भर में क्षितिज से आती हुई रवि की स्वर्ण रश्मि के स्पर्श मात्र से ही कमल खिल उठा। प्रिया के सुकोमल कर स्पर्श से सिहरने, पुलकने, मुलकने सा लगा। आलिंगन का पखुरिया फैला दी। रश्मि गुदगुदे गदेले पर थिरक उठी। कमल की पखुरी पखुरी मे मन मोहक रंग भर आया। वह विश्व से ऊपर उठने लगा मानो विश्व की माया उसे छू न सकेगी। उसके राग विराग उस तक पहुँचने में असमर्थ हो जायेगे। कमल गर्व से सिर ऊंचा कर विश्व को देखने लगा। उसके नेत्र सन्देश वाहक से प्रतीत होते थे। पङ्क से ऊंचा उठा हलका शरीर विश्व में मानव को चेतावनी दे रहा था।

तरल रत्नाकर के दर्पण में कमल का प्रतिविम्ब देख कर उसकी अभिसारिका चचल चचला ने अपने मद भरे गुलाबी नयनों से उस पर रँग उडेलना आरम्भ कर दिया। कमल की नस नस मे बिजली सी दौड़ गई। उसके मुख का रङ्ग अलौकिक

हो उठा मन्थर गति से चञ्चला रत्नाकर से निकल कमल की पखुरी पखुरी पर विहार करने लगी। उसके रक्तिम चरण तल से मिल कर कमल का रँग अजर अमर हो गया। चञ्चला की नवनीत सी कोमलता उसके अणु अणु मे व्याप्त हो गई, किन्तु चञ्चला की माया से कमल वेलाग रहा । साक्षात लक्ष्मी को धारण कर के भी चारों पल्ले हिलाता हुआ वह महर्षि सा झूमता रहा। जनक जल की भाति पक रूपी माया उसे छू न सकी।

विश्व ने उत्पादक और उत्पादन की समानता आश्चर्य से देखी। वह विश्व के लिये एक शील की कसौटी थी।

किंशुक वर्णी उषा ने कुम कुम छिटका कर पूजा की। उसके छींटों से क्षितिज अरुण हो उठा। कुसुमित हरीत वृक्ष वृन्दों को मलय समीर ने हिला डुला कर जगाया। मधुर झंकार से वह भी कुछ गा उठे। पुलक कर कुसुम खिलाये, और पूजा के लिये अर्पित करने लगे। मलय समीर भी मन्द मन्द कुछ गुन गुनाता सा स्वागत के, पूजा के सन्देश को विश्व भर मे भरने लगा।

हरीत वृक्ष वृन्द पर, तृण पात से बनाये जोड़ों मे नव जात शिशु भी इस मधुर वेला मे जग कर अपनी तुतली मीठी भाषा से कुछ गाकर जनक, जननी को जगाने लगे। अपने शिशुओं के मधुर गान से पुलकित होकर वह भी प्रार्थना में मग्न हो गये। उनके कलकण्ठ से निकली हुई झंकार उस शांत मोहक वेला मे बड़ी ही मधुर प्रतीत होती थी। उनकी रागनी ने सुषुप्ति अवस्था में पड़े मानव के कर्ण कुहर में प्रवेश किया। उसने धीरे से आंखे खोली, और स्वस्थ होकर प्रभाती गा उठा। उसके अलाप की भाव लहरी ने रत्नाकर की मृदुल लहरों मे कम्पन भरा। वह पुलकती, छिटकती झंकृत हो उठी। उनके राग ने गम्भीर सागर को हिलाया। वह अपने कर्कश स्वर मे गाता हुआ लहरों की अञ्जली से अर्घ्य देकर आतप की पूजा करने लगा। कोमल लहरें भी बुद् बुद् के फूल चढ़ाने लगी। अनेक पुजारियों के कलकण्ठ से निकले हुए मादक राग ने विश्व के अणु अणु में थिरकन भर दी।

इस वृहद् पूजा के अधिकारी ने कोई भेद भाव न रखते हुए समान रूप से अपने वैभव को वितरित किया।

विश्व मग्न होकर दोनों हाथों से वैभव लूटने लगा, किन्तु कौन जाने उसके कौन से हाथ मे जीत और कौन से मे हार है।

हार जीत के इस एकीकरण को आँख वाले ने ही देखा।

उद्वेलित मानस की मृदुल मृदुल लहरों के हृदय से निकला भाव और चाव भरा दुग्धफेन सा कोमल बुद् २ अपनी क्षणिकता भूल अनन्त जल राशि पर थिरकने लगा। उसने शक्ति शाली मानस की, और उसमे विचरण करने वाले भयकर जल जन्तुओं की किंचित भी चिन्ता न की। जरा सा भय भी उसे न हुआ। लहर के थपेड़ों से तो हॅसकर फूल उठा। कभी उसकी आड़ में छिप जाता। कभी आगे आकर हँस उठता। इसी प्रकार अठखेलिया करते हुए बुद् बुद् के कान मे लहर ने कुछ कहा। वह कापने लगा। उसे अपनी क्षणिकता कसकी।

लहर मुस्कराई। उसने सहला कर अपनी क्षणिकता बताते हुए कहा पगले! मिट जाने से क्या? बनना ही तो मिट जाना है, और मिट कर बनना ही तो जीवन है। बनते रहो, मिटते रहो।

बुद् बुद् फूला। उसने हॅस कर लहर को गुदगुदाया। अनेक बुद् बुद् फूल उठे।

किनारे पर बैठे मानव ने कहा बनना और मिटना ही सृष्टि का कर्म है।

आदिकाल से ही जब देव दानवों ने मिल कर समुद्र मथन किया था, तभी से उत्ताल तरंगों से तरंगित सागर के हृदय में मानव के प्रति कटु क्रोधाग्नि धधकती रहती है। वह क्षण २ में घोर गर्जन करता हुआ विश्व की ओर आता है। उसे नष्ट कर देने को, उसे निगल जाने को, किन्तु बीच ही में न जाने क्या सोच कर वह उलटे पाव लौट जाता है।

किनारे पर बैठे स्वार्थी मानव का जमघट उसे छेडता, कुरेदता, कोंचता रहता है। बडी बडी कामनाए लेकर दम साध कर उसके मानस मे घुस जाता है। डाका जनी करके जो कुछ हाथ लगता है, ले भागता है। विदग्ध सागर की ज्वाला भडक उठती है। अपनी आँखों अपना वैभव लुटता देखकर प्रतिकार की भावना सजग हो जाती है। वह मानव के स्वार्थ को घृणा से देखने लगता है। उसके हृदय मे एक कौंचनी सी लगी रहती है। एक पल को भी उसे शान्ती नहीं मिलती। कभी कभी तो उसकी क्रोधाग्नि इतनी प्रज्वलित हो उठती है कि कितनी ही दूर अग्नि ही अग्नि धधकती दिखाइ देती है। ईर्ष्या का विष उसके समस्त शरीर में व्याप्त हो जाता है। उसका जीवन खारी, कडुवा श्यामवर्ण हो गया है। किन्तु मायावी मानव को इससे क्या ?

उसे तो उसके अमूल्य रत्नों की चिन्ता है। जैसे भी हो उससे छीनने, लेने चाहिए। धन का प्यासा मानव प्राणों की बाजी लगाकर भी रत्नों को लेना चाहता है। मानों रत्नों के आगे प्राणों का कोई मूल्य नहीं।

रत्नाकर ने रत्नों के रक्षार्थ अपने मानस में कितने भयकर ? जल जन्तुओं को आश्रय दिया है, परन्तु मानव भय खाता हुआ भी गठकटे की भांति अपना कार्य बनाता ही रहता है। अनेक समय उदधि जब अधिक दुखी होता है तब स्वय ही आस पास की चीजें उठा कर मानव के पैरों में फेंक देता है। लोभी मानव इसको अपना तिरस्कार न समझ अधिकार समझ अपने दिल को और भी बढाने लगता है। जाल बिछाता है। गोताखोरों से इसका हृदय मथवा डालता है। सागर दांत किटकिटा कर घोर गर्जन करता हुआ लपकता है, किन्तु अपनी महानता मे क्षुद्र प्राणी को नगण्य समझ शांत हो जाता है। अन्तत महान महान ही है।

महान और क्षुद्र का व्यापार विश्व मे आलौकिक रहस्य है। इसको विश्वेश्वर ही जाने।

शत शत जलद पटल के आवरण को भेदकर चपल चचला सी चचल श्रम सीकर सी विमल धवल, मजुल भावनाओं मे डूबी हुई स्वाति बिन्दु अपने जलते हृदय को शीतल करने के लिये विद्युत गति से उत्ताल मान सरोवर को रोंदते हुए प्यासी सीपी के हृदय में आ बसी। उसमें रम जाने को, मिल जाने को।

सीपी ने चूमकर अपने हृदय का कोना २ खाली कर दिया। अपने हृदय का रग, आब, और चमक सब उस पर उडेल दिया। स्वाति का रग खिल उठा। चमकते यौवन के भार से इठलाती हुई स्वाति ललचीली आखों का तारा बन गई। मुक्ता बन गई।

अपने पलटते छलकते रूप को देख, स्वाति की प्यास बढ़ी। सीपी के कठोर सहवास से ऊब कर भोले चतुर स्निग्ध मानव के नयनों में अपना मूल्य अका देने की धुन में कुल बुलाने लगी।

गठकतरा लोभी मानव रत्नाकर मे अपनी प्यास बुझाने को आया। प्रथम ही सीपी उसके हाथ लगी। उसने उसके हृदय को चीर उसकी सचित राशि को निकाल लिया।

आबदार मोती को आखों मे लगाया। चूमा और हृदय से लगा अपनी लिप्सा शात की।

स्वार्थी मुक्ता ने ठुकराई सीपी को दुखियाते हुए कहा— कि देख निष्ठुर, शुष्क आज मेरी कीमत !! सीपी ने सिसक कर सूखे गले से कहा—हृदय छिदेगा तब पता लगेगा।

मुक्ता खिला। अरी पगली! हृदय बिन्धने पर ही तो मूल्य बढ़ता है।

मजुल गगन के हृदय पर धूम्र वर्णी सघन जलद दिशा विदिशा का ध्यान छोड़ हँस और चाव भरे मन से थिरक उठे। जलद के एक २ विन्दु मे प्रेम समाया था। उसकी एक एक भावना सजग और मधुर थी। वह अपने जीवन को जीवन में उड़लने के लिये आतुर हो छलक उठा।

भ्रमर सा काला कलूटा, चचरीक सा सुगन्धित अपनी हस सी ग्रीवा को उठा कर अपने जलचरी से गोल गोल भोले नयनों में प्रिय जलद का छलकता प्रतिबिम्ब मलकता देख कर प्रेमी मत्त मयूर का विमल मन नाच उठा। प्राण पुलक उठे, और गात थिरक उठा।

वह अपने चित्रित पखो को फैला कर विश्व को भूल अमर नाच नाच उठा। जलद के जीवन को प्राणों मे समा लिया।

जीवन जीवन में मिला। अभिलाषा भावना एकाकार हो गई।

चमकते हुए विस्तृत गगन के प्रांगण से, हिम से उद्भासित, शशिकर की रजत रश्मियों से सिंचित, झमकते तारों से होड लगा तरल तृपित ओस बिन्दु प्यार और साध समेटे हुए, वेगवान बतास के पखों पर चढ कर कुसुम दल की नवनीत सी पखुरी पर आकर थिरकने लगा।

कुसुम मुस्कराये। उसकी थिरकन देख कर एक दूसरे को सकेत करते हुए खिल खिला कर हँस पडे।

ओस बिन्दु ने उसे अपना स्वागत जाना। पुलक कर कुसुम उर में समा जाना चाहा। जी भर कर रगीले कुसुम को चूम कर अपनी प्यास और साध मिटाने लगा। उसके हृदय मे उसके नयनों मे कुसुक का रग चमकने लगा। मद की खुमारी से गुलाबी हुए नयन अजीब मतवाले हो उठे। वह झूम उठा।

सजीला कुसुम भी गर्वाया। सिर उठा कर मुक्ताहल जडे कुसुम दलों को देख कर फूल उठा।

सहयोगी 'समीर' ने एक क्षण में, एक झोंके में दोनों को एकाकार कर दिया।

कुसुम सुधा बिन्दु का पान कर अमर बना।

प्रेम के इस महान आदान प्रदान को विश्व ने अभेद दृष्टि से समझा।

धूमिल ऊष्ण श्वास के सार, मानस प्रदेश की निधि, तुहिन बिन्दु से तरल द्रवित, मोती से द्युतिमान, अश्रु मुक्त अपने प्रिय के चरणों मे गिर कर, बिखर कर मिट जाने को छिटक पडे।

प्रिय ने तड़प कर धड़कते हृदय से अपने सुदृढ़ करों मे उन्हें थाम लिया। उसके अनुराग रंजित छलकते नयनों के कुछ मोती ढुलक कर उन में आ मिले। उनमें मिल जाने को, खो जाने को।

मोती ने मोती की व्यथा जानी। बिन्दु ने बिन्दु का राग समझा, और प्रिय के पिघलते उर का अपनी तरलता से भान कराया।

प्रियतम का जलता हृदय अश्रु बिन्दु के छींटों से कुछ ठण्डा हुआ। उसने एक ही आह भर कर उन्हें छाती से लगा लिया।

जलते उर के स्पर्श से अश्रु बिन्दु मिट कर उसकी आती हुई ऊष्ण श्वास मे जा मिले। कुछ कहने को, अन्तर दिखा देने को।

प्रियतम ने अश्रु मुक्त में प्रिया के अन्तर को पढ़ा, और उन में खो गया।

मेघराशि के शत शत दलों को चीर कर वाष्प आया चन्द्रवदनी पावस, प्राणों में जीवन भर कर भोले विश्व को मोहने के लिये नग्न नृत्य नाचने लगी।

उसकी ताल ताल पर विश्व भी ठुमक उठा। नाच उठा। उसके अलसित नयन खिल उठे। मुर्झाये हृदय में नव जीवन का संचार हुआ, और सुधापान से सूखे अधर तृप्त हो गये।

मानव ने पावस के जीवन को जीवन में मिलाया। उसकी अमर साध का साध में। उसका सरल जीवन चमक उठा ठुमक कर उसने चारों ओर देखा। पावस का प्रभाव जड जगम प्राणी मात्र पर फैला हुआ पाया।

धरा ने हुलसित हृदय से अपने प्राणों के कपाट खोल दिये। वह किलक कर बिखर उठी। पावस के जीवन को मानस में समा कर जीवन प्रदायनी हो उठी।

डाल पर बैठे पक्षी मात्र उमग में भर कर पावस का यशोगान गा उठे। मादक पावस को देख वह मतवाले से हो गये। उनके मधुप कलरव से विश्व मोहक, सजीला सा प्रतीत होने लगा।

पावस गर्व से इठला कर हँसी। उस के अग प्रत्यग से फुलझड़ी सी खिल उठी।

लहलहाते लता पल्वों ने सजग हो कर पावस से झडे मुक्ताओं से अपने को सजाया। उनका जीवन खिल उठा। लास से फूल कर फूल खिला कर पावस का स्वागत करने लगे।

विश्व ने पावस से जीवन पाया। पावस ने विश्व से। अभेद प्रेम ही एकीकरण का पोषक है।

जौवन के चढ़ते प्रकाश मे, यौवन के छलकते प्रहर मे, भावनाओं के मधुमय पल में, उल्लास से भरे उल्लसित उर मे किसने धीरे से अनजाने मे स्फुलिंग को लाकर रख दिया उसके। उसका जीवन खोने को। झंझावात बुलाने को।

धीरे धीरे स्फुलिंग सतेज होने लगा। सुलगन लगा, दहकने लगा। वह विकल हुआ उसने मद पूरित नयनों से देखा कि उसके हृदय कमल की पखुरी पखुरी पर एक मधुमय चित्र अङ्कित है। वह अवाक हुआ। उसने लम्बी श्वास ली, जो स्फुलिंग का आधार भूत थी। उसको परिष्कृत करनेमें सहायक थी।

उसने नयन मून्द लिये, किन्तु सम्पुट हुए नयनों के निबिड अन्धकार में हर छवि और भी स्पष्ट होकर दीखने लगी। मधुर छवि को मुसकते हुए देख कर वह भी मुस्करा उठा। जाग्रति मे ही मधुर स्वप्न सजाने लगा। वह भूल उठा स्फुलिंग की ज्वाला को। उसके प्रखर उत्ताप को। उस रूप सुधा ने जलते जीवन पर जल कणों सा काम किया।

उसने सुखमय श्वास ली। वह सिहरा। उस पुलक से उसके नयन खुल गये, और साथ ही बिखर पडे वह अमिय स्वप्न। उसके मन में एक हूक सी उठी। उसने सोचा नारी स्फुलिंग है। क्या रूप, सुधा नहीं, मृत्यु है, गरल है। दूसरे शब्दों मे रूप ही क्या तृष्णा नहीं।

आह। यह वह तृष्णा है जो अमिट है। यह वह विष है जो नस नस में व्याप जाता है। यह वह असाध्य रोग है जिसकी

औषधि नहीं। उसके उर में स्फुलिंग सहस्र शिखी हो गया

नारी रूप स्फुलिंग पर उसने अपने यौवन का पुण्य चढ़ा दिया। जीवन की समिधा उंडेल दी। यह है उसके रूप का पुरुषकार।

एक वेला थी। एक उत्थान का सोपान, और था उसके विकाश का प्रहर। जब मद भरा जीवन दाडिम सा दमकता था। भावनायें खिलकर, किलक कर नयनों को सदेश वाहक बनाये उमड़ी पड़ती थी। नयन खिल कर चादनी बर्षाते थे। वीणा विनिदित स्वर कण कण मे जीवन भरता था। कैसे थे वे क्षण। कैसे थे वे दिन, और कैसा था वह जीवन।

अज्ञात यौवन ने परिमित पराग भर कर उसे लहराया। सुवासित किया। विकसाया। वह भूली सी, भोली सी उसे संभालन मे असमर्थ रही। उसने नहीं जाना कि प्रभु की इस देन को थाती रूप सभालू। जीवन निधि को सङ्कुचित कोण से व्यवहारू। बटमारों से उसकी रक्षा करूँ। ठगी से बचने को। निधि की रक्षा को।

पथ पर खड़ी सरल मना ने विगत काल की ओर देखा। खोई निधि की ओर। लुटे यौवन की ओर, और ठगे मन की ओर वह विक्षिप्त सी, खोई सी, कर मर्दन कर मसली आशा को हारी दृष्टि से देखती हुई विशाल भव में रम गई। अपना उल्लास ढू ढने। अपनी सिमित ढू ढने, और ढू ढने को अपना खिला जीवन।

किंतु मिटे बुद् बुद् को पाना। झडे फूल को खिलाना, बहते 'जीवन' को पा जाने के सदृष्य उस पगली का प्रयास था।

उल्लास से छलकते अमृत भरे उर को लेकर, साध से लपकती हुई, मधुर भावना से सिक्त हुई, भविष्य के उज्ज्वल मृदु चित्र को प्राण में भरे हुए विनीत हुई वह उस की चरण रज बनने को उस के पास आई। भव की यात्रा सफल बनाने को। मानस को ऊंचा उठाने को।

उसकी भावना गगन चुम्बी होकर लहरा उठी। उसका मानस चित्रित सा हो उठा। उसकी वीणा के तार अमर लोक का अलाप, अलाप उठे। उसने अपनी कुत्सित कामना को कुचल कर, उसके शव पर खड़ी होकर विमल साध को ऊंचा बहुत ऊंचा उठाया। भव से ऊपर उठने को। अमर आत्मा विकसाने को

कामना से समोय हुए, आशा से उद्वेलित, चाह से सजाय हुए उर में, उस भव पुरुष ने उसे समा लेना चाहा। प्यास की तृप्ति के लिये। कामना की पूर्ति के लिये। वह झिझकी, सम्भली। एक लम्बी श्वास लेकर नत मस्तक हो गई। भविष्य का चित्र धुंधला पड़ गया। प्राणों में कुछ वाष्प सा भर उठा। उसके लजीले अमि भरे नयन रक्ताभ हो उठे। छलक पडे। किस मधुर वेला में। जीवन के एकीकरण के समय में। दुर्भाग्य ने अनजाने में ही जीवन में ग्रन्थी लगादी।

वह बल बटोर कर द्विगुण भार लेकर चली, किन्तु जीवन यात्रा भारी हो उठी। दो मुखो तरी दो ओर बहने लगी। उसने साहस कर दोनों की पतवार सम्भाली, और एकी बहाव पर

चलाने का असफल सा प्रयत्न करने लगी। अपना विफल प्रयास देख कर बीच बीच म उसका मानस चित्कार कर उठता था। वह ठगी सी, खाली हुई सी, अन्तरित्त को निहारती हुई स्तब्ध रह जाती थी। यह थी उसके मधुर जीवन की भारी हार। मजुल सपनो की समाधि। उसके लक्ष की होल।।

उसके अणु अणु में प्यास, उसके कण कण में रोदन आज भी विश्व पर अंकित है।

न जाने कौन सी मधुर बेला मे, न जाने कौन से सुधा ढ़ले क्षणों में, न जाने कौन से मीठे प्रहर मे उसने, उसे देखा था। साथ ही न जाने कौन से निष्ठुर क्षणों में, न जाने कौन सी शुष्क वेला में, और कौन से कठोर प्रहर में उसने उसे देखा था। इस विचित्र सम्मिश्रण ने उसे साधना की वेदी पर चढ़ा दिया, किन्तु उद्वेलित मानस की उत्ताल तरंगों का सभालना सरल न था। अमि बौरे प्राणों की मिठास को मिटा देना कोई खेल नहीं था। प्यासे अधरों की तृष्णा जल कणों से ही मिट सकती है, अथवा जीवन की नि शेषता से।

उसने अपनी तृष्णा को अशान्त रखा। आशा को उर्वरा, और प्रेम मय सपनों को सजग रखते हुए ऊचे लक्ष की ओर ध्यानस्थ हो कर अपलक पगडंडी पर बढ़ने लगी, किन्तु उसका मार्ग अशेप था। उसकी मंजिल असीम थी।

यह धीर मति साधना में सलग्न हुई मानस की प्रति लहरों से अठखेलिया करते हुए अपने इष्ट को देख कर विभोर हो उठती। उसकी एकाग्रता की शक्ति से उसका मानस दीप्त हो उठता। प्रेम की ज्योति जल उठती, और प्यार का समुद्र लहरा उठता। वह बौरी भूल जाती निजको, भव को, विरह को। परमानन्द के प्रकोष्ठ पर चढ़ी हुई की साधना मधुर हो उठती। जीवन सजग हो उठता। यह थी उसके विरह की शुष्कता, कठोरता को मधु में ढ़ालना। मधुता और कटुता का सम्मिश्रण। जीवन के कुछ ही क्षणों के मृदु पल प्राण मे सजोये हुए प्रतीक्षा के न जाने

कितने क्षणों को यों ही सहज ही में बिता दिया, किन्तु उस भूले बटोही ने फिर मुडकर भी न देखा। न देखा। वह तो मानों कुछ क्षणों का प्रेम दूत था, या प्रेम मूर्ति। केवल अपनी याद की जोत जगाने के लिये अथवा प्रेम की पराकाष्ठा का उसके द्वारा दिग्दर्शन कराने के लिये ही आया था। इसको कौन जाने।

परन्तु उसके अटूट प्रेम ने विश्व पर एक छाप लगा दी। प्रेम अमर बना दिया। उसकी साधना फलित हुई। वह अमर हुई।

विश्व ने चकित नेत्रों से उसके नाम को सधि विद्युत अक्षरों मे उसके इष्ट के साथ अंकित देखो, "राधा कृष्ण"।

दासता की वेदियों मे जकड़ा हुआ तमच्छादित उद्वेलित विश्व प्रगति को छोड़ कर गति हीन अनिश्चित पथ की ओर बढ रहा था। ऐसे समय मे उस महा देव ने उस महत्तर नर ने आर्द्र विश्व को अपने दृढ़, भीष्म सकल्प से, उसे ऊचा उठाने को, उसे उभार कर, उसके क्षत भर कर प्रगति पर खड़ा करने का बीणा उठाया।

विश्व की अनेक यातनाये कठिनतायें उस हिम-पुरुष ने सही। वह पावन वरदान हो कर विश्व में मिलने को बढ़ा। विश्व ने उसका प्रेममय मन से स्वागत किया। अपनी अन्तर बीणा मे उसका वरदान युक्त स्वर भरा। सहर्ष सहस्त्र सहस्त्र हृदय कपाट उस प्रेम प्रतिमा के लिये खुल गये। विश्व अनिमिष नेत्रों से उसे निहार कर पुलकित हो उठा। उसने गद्‌गद्‌ होकर अपने समस्त पाप पुन्य उसके चरणों में उडेल दिये। विनित हुआ, अवाक् हुआ, कि कर्तव्य विमूढ हुआ नर, उसकी बाणी की, उसके सदेश की प्रतीक्षा में अहर्निशि रहने लगा।

सत्य और दया की साकार मूर्ति, न्याय का प्रतिबिम्ब मोहन दास ने "मोहन" के दास होने का ही सार्थक नहीं किया, प्रत्युत् प्राणी मात्र के दासत्व मे समा गया, और कर दिया अपने से जीव मात्र को अभिन्न।

सयम और साधना मे ढले जीवन को ले कर रक से राव तक अपने इस अपूर्व पुष्प को जनता के चरणों में चढाने के लिये प्रतिपल शात भाव से तत्पर हुआ प्रस्तुत रहता। जनता मे

मिल जाने को। उसमे समा जाने का। यह थी उसकी महानता, अलौकिकता।

उसके इस महान भार का भार विश्व ने आका। विश्व ने पहचाना। उस अालौकिक महा पुरुप की अपूर्व शक्ति ने विश्व को चमका दिया। उसे जगा दिया, उसे उठा दिया, किन्तु आह — उसने अपने अवसान की वेला मे, मध्यायन के प्रहर में उसे जगाया। शून्य में तडपने को, विलपने को।

अन्तरिक्ष की ओर निहारता हुआ विश्व उसके इस मधु भार को लेकर असमर्थ हो उठा। उसका अ तर नाद कण २ में गूँज उठा, किन्तु उसकी प्रतिध्वनि से विश्व आश्चर्यावि त हो कर शक्ति युक्त हो उठा। वह प्रगति की ओर बढा। अपने बापू के लक्ष्य की पूर्ति के लिये। महान उद्देश्य की सफलता के लिये। उसकी स्मृति को साकार बनाने के लिये।

निधि खोकर स्मृति के सहारे विश्व उस पगडडी की ओर बढ चला। जिस पर उस महा पुरुप के चरण चिन्ह अकित है। उन चिन्हों को खोजता, सभालता हुआ, प्राणों में उस पावन प्रतिमा को छिपाये हुए, कर्ण कुहरों में सत्य, अहिंसा का मधुर स्वर भरे हुए वह बढ चला है अमृत की खोज में। मार्ग की नि शेपता में। आदर्श की स्थापना में।

बापू के महा प्रयाण का आलोक विश्व का मार्ग प्रदर्शक होगा। उसकी विभूति होगी।

रत्नाभ के गर्भ मे, प्रशात महासागर की गोद मे, कोमल तर अचल में निहित, सम्पुट नयनों से शिशुजात निद्रा में निमग्न कमल का सुनहले मोहक प्रभात मे रागनी की जननी बीणापाणि ने प्यार मे स्पर्श किया। कमल ने मुस्करा कर उनींदे नयनों से स्नेही को निहारा, और खिल कर उसका स्वागत किया।

श्वेताम्बरी ने देखा उसके रक्ताभ नयनों की झलक उसकी पखुरी पखुरी पर व्याप्त गई! उसका अग प्रत्यग कोमल तर हो उठा। उसके प्यार की छाप उसके अणु अणु पर लग कर रँगीली हो उठी। उसकी श्वास प्रशास मे अपने को आलोडित पाया। कमल का झूमता हुआ देख कर वह भी पुलक उठी।

उसके नयनों में कमल अपने को झूमता हुआ देख स्थिर गात हो गया। प्यार से छलछलाये उर को उसके मृदु चरणों मे रख दिया। उसकी लचक नाल में भर, उसका स्नेह पखुरी गत प्राण मे भर, नवनीत सी कमनीयता गात मे भर कर कमल अमर हो उठा।

यह था उसके प्रेम का आदान, प्रदान, जो चिर काल से अजर अमर अजीत है।

रजनी को विरिहणी बना कर, उसे विनिष्ट कर, उसकी खिलती आशा को मसल कर, प्रभात मुलक कर प्राणी मात्र को सचेत करने लगा और भरने लगा नव जीवन।

मृदुला गृहणी लपक कर नित्य नियम मे लगी। बालक किलक कर बाधक हुआ, उसे सुधापान करा, अलसाये हुए देव की ओर निहारा, मुस्कराई। एक क्षण में गृहस्थी खिल उठी। अपनी भरी पूरी वाटिका में दम्पत्ति झूम उठे। सुख सम्पदा से मन विभोर था।

यह था उनके नव जीवन का प्रभात। जीवन की चरमोन्नति सुखी जीवन का पूरा उल्लास।

पल में छलनामयी विधना ने उन्हें क्रूर नयनों से देखा। उनका सुख उसे असह्य हुआ। अपने जलते नयनों से भस्मसात किया। नयन मुक्ता से अञ्चल भरे मृदुला सिसक उठी। वैभव की रानी राह की भिक्षुक बनी। शुष्क अधर शिशु को छाती से लगा, साहस बटोर प्रिय को निहार दो अश्रु-बिन्दु से चरण धोये, और अपना मन धोकर सतोप की श्वास ली।

निश्चल नयनों में देव के नयन गड़ा मुलकी। दोनों का हृदय भार हलका हुआ। विधना का कोप फूल सा हो उठा।

यह था नारी के प्रेम का जादू। उसके कौशल की रचना! उसके सहवास का पुरुषकार।

हीरक द्युति को लजाने वाली, चन्द्र मंडित लावण्यमयी, कोकिल कंठी मधुर भाषिणी रमणी ने तारक मंडलकी ओर निहारते हुए एक दीर्घ उच्छ्वास से किंचित निस्तब्धता भंग की। छल छलाये नयन कण धरा पर छिटकने लगे। क्या धरा और अम्बर का भेद मिटाने को ?

निशानाथ की कांती फीकी पड़ने लगी। निशिथिनी विछोह का पल देख म्लान मुखी हो उठी। अकुला ने आकुल होकर फ्लाक की ओर निहारा, और खिन्न होकर शैया पर गिर कर सुबक उठी। निद्रा ने दयार्द्र होकर उसे थपकी दी। भव के सब दुख विनिद्रित हो उठे।

दूसरे पल एक कर्कश वाणी ने उसे सचेत किया। उस का हृदय धक से हुआ। शिथिल गात से सिमिट कर उठ बैठी। सुरा सेवी उस के भाग्य विधाता ने लड़ खड़ाई वाणी से गरल उडेलते हुए एक ठोकर दी, और दांत किटकिटा कर शैया पर जा गिरा।

परित्यक्ता ने दयार्द्र नयनों से देव की ओर देखा, और धीरज बटोर कर प्रभात हुआ जान अलसाई गुलाबी आँखों को मलते हुए गृह कार्य में लगी। चट से कलऊ तैयार किया, दूसरे ही क्षण दुग्ध प्याली निर्दयता से सहन मे जा खनखाई।

काश वह न जुड़ने वाली धातु होती तो कहीं अच्छा होता। अकुला अपनी ओर प्याली की समता मे सलग्न रही। सहसा वह कह उठी नारी जीवन कण मे मिल कर ही तो उठता है, और उठने वाला गिरता ही है फिर – –

रमणी को कम्पा देने वाले ज्वलन्त चित्र ही भव की मोहकता और आकर्षण है।

नव प्रणीता वधु की माग के सिन्दूर सदृश, सुधा मिश्रित नव पल मे, जीवन के उच्चतम सौपान पर मधुर भावों से उद्वेलित हुआ मन गगन चुम्बी हो रहा था। तारों मे तारे गड़ा कर इगुर वर्णी ऊषा की अरुणिमा मे भावों को सिक्त कर अलबेले से स्वप्न सजाकर स्वय ही मुग्धा हो उठी।

इठला कर तारों से पूछा क्या मेरे स्वप्न सत्य से शून्य है? तारे मुलक कर झप झपाये। ऊषा तारों को इगित कर अदृश्य होती हुई क्षणिकता का आभास दे चली।

वह उनकी कुटिलता को देख कर अपने सपनों को सत्य करने के प्रयास मे लगा। एक एक भाव पर एक २ स्वप्न बनाया। कहीं फूलों सा कोमल, कहीं पँखुरी सा मृदुल, चिक्कन, पतुरा। कहीं प्रभात सा रँग भर। कहीं चन्द्रिका सा उज्ज्वल बना, अगणित अनुराग भर, सुनहले रागों से सजा कर, प्राणों की सपूर्ण ममता से सिक्त कर डाला। अपनी धुन में सपनों को अमर समझ अशकित हो उठी। फूल कर सपनों से खेलने लगी।

आख मिचौनी के इस खेल मे धीरे २ सपन बलीन होने लगे। फूल से झड़ने लगे। तारों से टूटने लगे। वह ठगी सी हो कर तारों और ऊषा को ढूढने लगा। सोचा उनका वचन या शाप सत्य मानू या अपने स्वप्न असत्य।

तारे, ऊषा, सोपान, सपन सब क्षणिक् धरातल के स्तर पर भव की अनित्यता देख सिहर उठा।

नीले नीले नीलाकाश के नीचे सहस्रों नील नयनों को भुलाते और ठगते हुए मोहासिक्त मद भरे निलज नयनों ने नयनों में नयन गडा कर कुछ कहा। कुछ पढ़ा।

छूई मूई सदृश्य लजीले झुक उठे। कुछ कह उठे। गुलाबी झलक पलकों की ओट छिपा कर हृदय गुद गुदा उठा। सम्पुट से हुए नयन रक्तिम आभा लेकर खुले। मुलके। अपने समर्पण का पहला पृष्ठ खोल कर।

प्यार के इस आदान प्रदान को नयन धन समझ कर वह प्रेम की पगडण्डी पर चल पडी। अपनी अमित गाथा को सहलाते हुए, उकसाते हुए, सुलझाते हुए।

किन्तु भोली। भूली अन्तरिक्ष मे जा अटकी। प्रवासी नयनों की खोज में। नील गगन में लगे नयन धुन्धया गये। श्यामलता झलक उठ उठी जीवन सध्या की। अन्तिम बेला का। किन्तु बटोही के नीलाम्बुज नयनों को वह फिर न देख सकी, न देख सकी। आह समेट कर प्राणों में समाली। नयन मूंत जीवन का सहारा बनी। समाधिस्थ सी होकर विश्व मार्ग पर बढ़ी। अपनी लक्षित आहुति के लिये।

यह थी विश्व के रग मच की रगीली आहूति। और था विश्व की धूर्तता का सुनहला चित्र।

विश्व के प्रपञ्चों से परे, ससार के बन्धनों प्रति बन्धनों से दूर, जग की माया मोह से हीन, सरल भोला मन, स्वछन्द विहारी पंछी की भांति मुक्त हुआ, कलि सा मुस्काता, पल्लव दल सा झूमता हुआ क्रीड़ा रत रहता था। न कोई कामना की लगन थी, न भावना ही विचलित थी। न कोई आशा प्रत्याशा की चाह थी। न ही आदान प्रदान का कोई रोग। सरल जीवन, सरल क्रीडा, सरल स्नेह में भीगा मन नन्दन कानन में विचरण करता था।

किन्तु ईर्षालु देव को असह्य हुआ। भव में नन्द कानन? सरल मानवी प्रपच से रहित। विधाता की रचना पर आघात? आह — भर कर लम्बी उष्ण श्वास छोड़ी। वह तीर सी उष्ण वायु उसके रोम रोम में समा गई। हृदय में ज्वाला जगी, कामना प्रस्फुटित हुई। भावना डावा डोल। यह विचलित हो उठी। जब माया ने उसे हिलाया। उस के गुलाबी हुए नयन, नये ही ससार की रचना मे तल्लान हो उठे। मन नित नई उधेड़ बुन में फसा, प्रतिपल नवीन प्रथा लगाता हुआ उलझता जाने लगा। उस का मन, तन, भावना, विचार कुछ भी अपने न रहे। अनजान मे ही यौवन लहरा उठा। किशोरता को हटा कर। वह चकित मृगी सी अपनी सरलता को, नन्हे नेह को, भोले ससार को ढूढने लगी, किन्तु सब व्यर्थ। सब विडम्बना? सब क्षणिक बुद् बुद्।

यह था जीवन की विडम्बना का एक चित्र, और था विधि की नियमता का रहस्य।

विश्रांति में डूबा, उद्भ्रांत क्लांत मन अपनी समस्त विकल भावनाओं को बटोर कर, उर के कोने २ से पीड़ा को समेट कर, विरह के ज्वलंत ताप से तापित, प्रवृति मार्ग को ठेल कर, निवृत्ति में लगा, अनुनय विनय से थकित हुआ मनुहार उठा, गुहार उठा।

कण कण विकल हुआ। पल पल सिहर उठा। भव का वातावरण काँप उठा। उसकी दयार्द्र अंतस्तल की पीड़ा भरी पुकार सुन कर, किन्तु सम्भवतः ब्रह्मांड को भेद कर उस अनन्त तक न पहुँची, अथवा उसने न सुनी।

अपने गंतव्य मार्ग पर दृढ़ बटोही उस जादूगर की थाह में अनन्त की ओर वह चला। पीड़ा को भूल कर, भव को भूल कर, और भेद विभेद को मिटा कर।

निराकार को साकार देखने की चाह में, एकाकार हो समाधिस्थ हो चला। वाणी, भाषा, मनुहार, पुकार सब स्थिर हो, धीरे २ उसमें मिल उठीं। वाणी मुरली के लय में मिल थिरक उठी। भाषा उसके श्याम रतनारे नयनों में खिल कर नाच उठी। मन भ्रमर नव विकसित मुख कमल पर मंडरा कर गूँज २ विदेह हो चला।

उसने खिलते, मुलकते साकार में ब्रह्मांड देखा, और देखा अपने जादूगर को।

युगों से बजर हुए प्राणों में सुधा वर्षण से सरसता लहरा उठी। अरुणिमा का साम्राज्य छा गया। मधु मालती सा मन पुहुप खिल उठा। रँगीले सपनों ने नयनों में इन्द्र धनुष बना दिया। भावनायें पुलक उठी। भूमिधर मानों अम्बर मे उड़ने लगा, जब उसने अपनी मुक्तता का अपनी अन्नदात्रि को निज की निधि होने का सदेश सुना।

अतीत के जर्जर कंकप झुलसते से पृष्ठों को पलटते हुए, भविष्य के सुनहले चित्रों का चित्राकरण करने लगा। भावावेश के पुलक मे एक नये ही ससार मे विचरण करने लगा। जहा सुख समृद्धि के अतिरिक्त, न लोह शृङ्खलायें थी, न ऋण का भार, न अपमान आग, न बज्र सी मार।

बन्धन मुक्त हलधर अणु अणु को मुक्त, अणु अणु मे नव जीवन, नव उल्लास, नव स्फूर्ति देखने लगा। यह था इस के मुक्त हुए प्राणों का प्रभाव। उस के मुक्त मन की प्रतिच्छाया।

सयत मन से भूमि ईश अपने नव जीवन के निर्माण में लगा, धरा को नव रूप, नव जीवन देने लगा।

धरा और गगन के ईश की प्रतिस्पर्धा मे किस की विजय हो। यह कौन जाने।

उजले प्रहर मे रस रँग भरा था। हार शृंगार से सलोने स्वप्न खिलते थे। प्रेम मदिरा मे छलकते थे नयन। तेज, श्रोज सौन्दर्य भरा था, श्रौर भरा था आकर्षण करने वाला जादू। लुभाने वाला मोह।

जीवन के अग्रदूत? अन्तस्तल के भेदक? भव तुम्हारी गति पर यन्त्र सा चालित था। तुममें वशी करण समाया था। मानव जीवन खिलौना था। नाट्य करना तुम्हारा कार्य। अहर्निशि रँग मँच बदलते थे। कितने ही चित्रों को चित्रित करते। कितनों में ही उलझ पडते। कितनों को मिटा डालते। मानों जीवन के विधाता बने थे। पोषक, पालक, सहारक।

किन्तु — आज — कहा वह मीठे सपने? कहा वह लावण्य? कहा वह जादू? छिटकती चान्दनी में कहा से श्रमा श्रा उतरी? जग क्यों फिर उठा? सारा वातावरण उपेक्षित? कला कौशल सब शक्ति हीन? तुम ठगे से प्रभाहीन हो उठे?

भव का नियम, गति का फेर, समय की चाल, कौन पलट सका है।

फुलझड़िया बन चुकी थी आशायें। सौरव्य मिट चुका था। हास्य बिखर चुका था। कामनायें आकाश कुसुम थी। माया स्वप्न की खोज थी। विश्व विषधर सा बना था। मानों उसका सृजन उत्पीडन के लिये ही हो। अहर्निशि अपने सृजनहार को पुकारत, कोसती, कलापती थी, किन्तु उस निष्ठुर के मानों नयन मूंदे हों। एक न सुनता, न सुनता।

फिर भी पीड़ा के भार को हलका करने का केवल एक ही साधन था। नयन कणों से ज्वाला शांत करने का। पल को विश्रान्ति मिलती। क्षणिक शान्ति।

भव के वैभव को देख प्राणों मे टीस सी उठती कि मेरा भाग्य इतना नगण्य — — तन को वस्त्र नहीं। क्षुधा मिटाने को मुट्ठी भर अन्न दुर्लभ। उसकी नयन प्याली छलक उठती। अपने दुर्दांत देव के चरणों को सिक्त करने को। अथवा वाकी रची निधि को बखेर डालने को। इस मर्म को अज्ञात ही जाने ?

हूक, टीस, जलन, पीड़ा अंचल मे भर मानुषी कंकाल खाली कर डाला। नयन मुक्त लुटा कर, नयन आभाहीन कर डाले। घनीभूत पीडा से विकल हुई दीना पुकार उठी। ओ मेरे अंचल के भार को सभालो, और शेप बचे दो नयन कण इस निर्मोही देव के चरणों पर चढा निस्तेज हो गई। निष्प्राण हो गई। भव को ठुकरा कर।

यह था निष्ठुर भव की पराजय का ज्वलत उदाहरण, अथवा विधि की अवज्ञा का जलता चित्र॥

॥ इति शुभम् ॥

917, चिरानीपट्टी, कटघरापट्टी, सुल्तानपुर, उ० प्र०।
या एम० ए० (पूर्वार्द्ध) अंग्रेजी साहित्य में।
र्ता, समाज, प्रदीप, चित्ररेखा, हंस और कहानी आदि
र समाचार पत्रों का सह सम्पादन कर चुके हैं।
गणेशराय नेशनल इण्टर कालेज जौनपुर में अंग्रेजी के

रान विदेशी छात्रों को हिन्दी, संस्कृत और उर्दू की

विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय की द्वैभाषिक कोश
रियोजना में कार्य।

बोध पीठ, सागर विश्वविद्यालय सागर (म० प्र०)।
ी (कविता संग्रह 1945 दूसरा संस्करण 1977)
ब और बुलबुल (गजलें और रुबाइयाँ 1956)
त (सॉनेट 1957)
के ताए हुए दिन (कविता संग्रह 1980)
(कविता संग्रह 1980)
नपद का कवि हूँ (क